ISSN 0973-8568

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल

वर्ष 17 जून 2019 अंक 1

प्रधान सम्पादक
नलिनी रेवड़ीकर

सम्पादक
यतीन्द्रसिंह सिसोदिया

उप सम्पादक
आशीष भट्ट
सुदीप मिश्र

म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल

प्रधान सम्पादक

प्रोफेसर नलिनी रेवड़ीकर

सम्पादक

प्रोफेसर यतीन्द्रसिंह सिसोदिया

उप-सम्पादक

डॉ. आशीष भट्ट

डॉ. सुदीप मिश्र

सलाहकार मण्डल

प्रोफेसर गोपालकृष्ण शर्मा
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

प्रोफेसर अनिल कुमार वर्मा
क्राइस्ट चर्च कॉलेज, कानपुर (उ.प्र.)

प्रोफेसर संजय लोढ़ा
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

प्रोफेसर मणीन्द्रनाथ ठाकुर
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

प्रोफेसर डी.एम. दिवाकर
ए.एन. सिन्हा समाज विज्ञान संस्थान, पटना (बिहार)

प्रोफेसर बद्रीनारायण
जी.बी. पन्त समाज विज्ञान संस्थान, इलाहबाद (उ.प्र.)

प्रोफेसर सन्दीप जोशी
म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

ISSN 0973-8568

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल

वर्ष 17 जून 2019 अंक 1

प्रधान सम्पादक
प्रोफेसर नलिनी रेवड़ीकर

सम्पादक
प्रोफेसर यतीन्द्रसिंह सिसोदिया

उप-सम्पादक
डॉ. आशीष भट्ट
डॉ. सुदीप मिश्र

म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान
(भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान परिषद्, मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली एवं उच्च शिक्षा मन्त्रालय, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल का स्वायत्त शोध संस्थान)
6, प्रोफेसर रामसखा गौतम मार्ग, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र
उज्जैन - 456010 (मध्यप्रदेश)

म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन द्वारा प्रकाशित ***मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल*** अन्तर्विषयक प्रकृति का अर्द्धवार्षिक जर्नल है। जर्नल के प्रकाशन का उद्देश्य समाज विज्ञानों में अध्ययन एवं अनुसन्धान को बढ़ावा देना तथा समसामयिक विषयों पर लेखकों एवं शोधार्थियों को लेखन एवं सन्दर्भ हेतु समुचित अवसर प्रदान करना है।

समाज विज्ञानियों एवं शोधार्थियों से भारतीय एवं क्षेत्रीय सन्दर्भों पर सम-सामयिक विषयों यथा - सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, विकासात्मक, प्रशासनिक मुद्दों, समस्याओं एवं प्रक्रियाओं पर शोधपरक आलेख, पुस्तक समीक्षा आदि आमन्त्रित हैं।

सदस्यता शुल्क

वार्षिक		**प्रति अंक**	
संस्थागत	रु. 400.00	संस्थागत	रु. 200.00
व्यक्तिगत	रु. 300.00	व्यक्तिगत	रु. 150.00

जर्नल हेतु सदस्यता शुल्क बैंक ड्राफ्ट/चैक द्वारा निम्न पते पर भेजें

निदेशक
म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान
6, प्रोफेसर रामसखा गौतम मार्ग, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र
उज्जैन - 456010 (मध्यप्रदेश)
दूरभाष - (0734) 2510978, फैक्स - (0734) 2512450
e-mail: mpissrhindijournal@gmail.com, mpissr@yahoo.co.in
web: mpissr.org

ISSN 0973-8568

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल

(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)

वर्ष 17 जून 2019 अंक 1

ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका शिक्षा की चुनौतियाँ एवं सरकारी नीति 1
- आरसी प्रसाद झा

शासकीय सेवानिवृत्त व्यक्तियों की परिवार एवं समाज में भागीदारी का समाजशास्त्रीय अध्ययन (इन्दौर नगर के विशेष सन्दर्भ में) 19
- प्रकाशिनी तिवारी

आपदा और विकास के सन्दर्भ में उत्तर प्रदेश के बहराईच जिले में आजीविका का अध्ययन 34
- केयूर पाठक एवं बिधु भरद्वाज

निर्माण क्षेत्र के श्रमिकों के अधिकार एवं योजनाओं का समलोचनात्मक अध्ययन 50
- मोनिका चौधरी

सामाजिक चेतना में सन्त साहित्य की भूमिका 57
- अर्चना मेहता

ग्रामीण क्षेत्र में आवास की स्थिति एवं समस्याएँ : धार जिले में प्रधानमन्त्री आवास योजना ग्रामीण के विशेष सन्दर्भ में **63**
- ममता पंवार

पुस्तक समीक्षा
वर्तमान हिन्दी पत्रकारिता की नब्ज़ पहचानने की कोशिश (अर्चना प्रकाश मेहता) **72**
- आशीष दशोत्तर

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 1-18)

ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका शिक्षा की चुनौतियाँ एवं सरकारी नीति

आरसी प्रसाद झा*

शिक्षा एक स्वस्थ समाज के निर्माण में अहम् भूमिका निभाती है। आजादी के बाद से हमारे देश में शिक्षा स्तर को बढ़ावा देने के लिए कई समितियों एवं कार्यक्रमों का निर्माण हुआ जो आज तक जारी है। इन कारणों से शिक्षा के क्षेत्र में सुधार हुए लेकिन जिस स्तर पर शिक्षा का विकास होना चाहिए था वह नहीं हो पाया। शिक्षा का आधुनिकीकरण केवल शहरी क्षेत्रों में ही सीमित होकर रह गया। इसका कारण यह है कि शहर एवं ग्रामीण क्षेत्रों के मध्य वैचारिक आदान-प्रदान का अभाव है। शहर से शिक्षक प्रतिदिन विद्यालय आते-जाते हैं। वे वहाँ रहना नहीं चाहते। यहाँ पदस्थ शिक्षक लम्बे समय तक अनुपस्थित रहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका विद्यालय एवं शिक्षिकाओं की सीमित संख्या होने के कारण ग्रामीण बालिकाएँ पठन-पाठन हेतु स्वयं को असमर्थ पाती हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव भी है। अध्ययन के परिणाम इंगित करते हैं कि भारतीय संविधान एवं कानून, सरकारी नीति एवं कार्यक्रम, महिला आयोग, मानवाधिकार आयोग, राष्ट्रीय जनसहयोग एवं बाल विकास संस्थान, गैर सरकारी संगठन, प्रभावकारी मीडिया आदि के माध्यम से महिलाओं को विशेषाधिकार, आरक्षण और अन्य संवैधानिक सुविधाएँ दी जा रही हैं जिसका परिणाम है कि बालिकाएँ शिक्षित तो हो रही हैं किन्तु इसे पूर्ण सुधार नहीं माना जा सकता।

*अनुसन्धान सहयोगी, भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण, उदयपुर (राजस्थान).
E-mail: arsiprasadjha@yahoo.com

वैदिक काल में महिलाओं की सामाजिक स्थिति बहुत ही सुदृढ़ थी, उन्हें समाज में पुरुषों के समान ही अधिकारों की प्राप्ति थी, लेकिन वास्तविकता में महिलाओं की समाज में स्थिति विषम होती रही है। वह हमेशा से ही पुरुष प्रधान समाज में शोषण का शिकार होती रही है। कालान्तर में समय के साथ समाज में कई अच्छे और बुरे परिवर्तन हुए, जिसमें मूल रूप से कहीं न कहीं पुरुषवादी समाज की आकांक्षा हावी दिखाई पड़ती है।

सशक्तिकरण (विशेषकर महिला सशक्तिकरण) में शिक्षा का स्थान महत्वपूर्ण है। व्यक्ति के जीवन में शिक्षा जीवन की आधारशिला का कार्य करती है। जिस पर व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण होता है। स्वामी विवेकानन्द ने जीवन का एकमात्र उद्देश्य शिक्षा प्राप्ति को ही बताया है। स्वामी विवेकानन्द ने सर्वसाधारण को शिक्षित करने और शिक्षा के माध्यम से उन्नत करने की बात कही। बालिका शिक्षा के सन्दर्भ में उनका मानना था कि कोई भी देश तब तक प्रगति नहीं कर सकता है जब तक कि उस देश की महिलाएँ शिक्षित एवं कामकाजी न हो जाएँ।

आज के समय में जब हम महिलाओं के सशक्तिकरण की बात करते हैं तो कहीं न कहीं आधी आबादी को सशक्त बनाने की बात करते हैं। क्योंकि यह आधी आबादी अभी भी अपने हक और विकास के लाभ से वंचित एवं शोषित जीवन जी रही है। किसी भी समाज की तरक्की का मूलमन्त्र शिक्षा है। महात्मा गाँधी ने भी कहा है कि एक महिला के शिक्षित होने से पूरा परिवार शिक्षित होता है। अत: शिक्षा महिला सशक्तिकरण की दिशा में नींव के पत्थर का कार्य करती है। परमार (2020) ने बताया है कि शिक्षा के माध्यम से महिलाएँ सशक्त होती हैं और इसके उपरान्त ही सामाजिक उन्नयन और सुदृढ़ राष्ट्र की कल्पना की जा सकती है। देशमुख (2019) ने भी अपने अध्ययनोपरान्त पाया कि समाज सुधारकों, नारीवादी संगठनों तथा शासन आदि के द्वारा नारी मुक्ति, शिक्षा और रोजगार के लिए कई प्रयास किये जा रहे हैं जिसका परिणाम यह रहा कि महिलाओं की उत्तरोत्तर प्रगति, विशेषकर उच्च एवं मध्यम वर्ग की महिलाओं में आज दिख रही है। झा (2019) के अध्ययन के परिणाम इंगित करते हैं कि महिलाएँ शिक्षित होने से अब कामकाजी हो रही हैं, जो कि इनके लिए आत्मनिर्भरता, स्वाभिमान और स्वतन्त्र निर्णय लेने में सहायक सिद्ध हो रही है। महाजन एवं महाजन (2015) ने कहा है कि समग्र रूप से गरीबी उन्मूलन के लिए, बाल मृत्युदर को कम करने के लिए, जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रण में रखने के लिए, स्त्री-पुरुष में समानता को बढ़ावा देने के लिए तथा सतत विकास और लोकतन्त्र की शाश्वतता एवं सुनिश्चितता के लिए महिलाओं का साक्षर होना आवश्यक है। राय (2015) ने कहा है कि उच्च शिक्षा महिलाओं को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उन्होंने यह भी कहा कि महिलाओं के उच्च शिक्षित होने से उनमें कौशल निर्माण, रोजगार सृजन, आत्मविश्वास, समस्या समाधान, मूलभूत जिज्ञासाओं तथा आवश्यकताओं, मौखिक तथा शाब्दिक अभिव्यक्ति, संख्यात्मक और तार्किक क्षमता, जीवित रहने तथा गरिमामय जीवनयापन, सर्वांगीण क्षमता विकास और सक्षमता/आत्मनिर्भरता आदि का विकास होता है। कुसुमाकर (2015) ने भी सशक्तिकरण के दृष्टिकोण से महिला

का उच्च शिक्षित होना आवश्यक बताया और कहा कि उच्च शिक्षा महिला के लिए रास्ता खोलती है जिसके फलस्वरूप महिलाएँ सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक स्तर पर सशक्त बनकर देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं। शिक्षा महिलाओं में निर्भयता और स्वावलम्बन की भावना पैदा करती है, जीवन निर्वाह का साधन बनती है तथा आजाद रहने का हौसला और सामर्थ्य प्रदान करती है। डावर (2015) ने बताया कि महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में व्यावसायिक शिक्षा ही एकमात्र कुंजी है।

शिक्षा का अधिकार संविधान के अन्तर्गत दिया गया है। अनुच्छेद 45 में उल्लेख किया गया है कि सभी राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा सभी बच्चों को चौदह वर्ष की आयु पूरी होने तक नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करायी जाये। नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम - 2009 की धारा 4 में उल्लेख है कि ऐसे बच्चे जो कभी भी किसी कक्षा में नामांकित नहीं हुए या पूर्व में कभी नामांकित थे या विद्यालयीन शिक्षा को अधूरा छोड़ दिया था, ऐसे बच्चों को शिक्षा से जोड़ने के लिए इसके अन्तर्गत उनकी उम्र के अनुसार प्रारम्भिक कक्षा तक नामांकित किया जाये। इसी प्रकार, नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम - 2011 की धारा 6 में उल्लेख है कि आयु के अनुरूप (14 वर्ष की उम्र तक) कक्षा में प्रवेशित बालक को 3 माह से लेकर 2 वर्ष तक विशेष प्रशिक्षण और नियमित कक्षा स्तर में सुधार लाकर इन्हें शिक्षा से जोड़ा जा सकता है।

वैश्विक स्तर पर बालिकाओं की स्थिति

अब समय में परिवर्तन आ रहा है एवं बालिकाएँ शिक्षा की ओर अग्रसर हो रही हैं। दुनिया के छह श्रेष्ठ विश्वविद्यालयों में ब्रिटेन के ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय का नाम है। इस विश्वविद्यालय में भी बालिका नामांकन को बढ़ावा देने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं एवं इस विश्वविद्यालय के 922 साल के इतिहास में पहली बार वर्ष 2017 में स्नातक स्तर पर 1025 छात्रों और 1070 छात्राओं ने नामांकन करवाया है। यहाँ आवेदन करने वालों में भी बालकों (1165) की तुलना में बालिकाएँ (1275) अधिक थीं। इस विश्वविद्यालय से जुड़े 38 में से 13 महाविद्यालयों में महिला प्राचार्य हैं। 2016 में विश्वविद्यालय ने महिला 'कुलपति' और महिला 'वार्डन' की नियुक्ति भी की थी। इसी तरह, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में भी प्रयास जारी हैं और यहाँ पर वर्तमान नामांकन अनुपात 1440 पुरुष (बालक) एवं महिला (बालिका) 1405 है, जो यह इंगित करता है कि बालिकाएँ वैश्विक स्तर पर शिक्षा के क्षेत्र में सशक्त हो रही हैं। टाइम्स हायर एजूकेशन रैंकिंग के मुताबिक दुनिया के श्रेष्ठ 200 विश्वविद्यालयों में से सिर्फ आठ में बालक-बालिकाओं का अनुपात बराबर है जिनमें जॉन हॉपकिंग युनिवर्सिटी, येल युनिवर्सिटी, कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी, युनिवर्सिटी ऑफ वेस्टर्न एशिया, युनिवर्सिटी ऑफ मियामी, एरिजोना स्टेट युनिवर्सिटी, युनिवर्सिटी आफ लक्जेम्बर्ग और न्यूकैसल युनिवर्सिटी है। दुनिया के श्रेष्ठ 10 विश्वविद्यालयों में से सिर्फ दो में छात्र-छात्राओं का अनुपात बराबर है। यूनेस्को, 2016 के अनुसार, वैश्विक स्तर पर बालक और बालिका शिक्षा सहित अन्य वंचित समूहों

को शिक्षा से जोड़ने के लिए समावेशी शिक्षा (इनक्लूसिव एजूकेशन) 2030 का लक्ष्य रखा गया है, जो बालिका शिक्षा सहित अन्य वंचित समूह के बच्चों के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा (एडिटोरियल, 2016)। अत: यूनेस्को का यह प्रयास वैश्विक स्तर पर महिलाओं को शिक्षा से जोड़ने में सहायक सिद्ध होगा।

भारत में बालिका शिक्षा

भारत में युवाओं के साक्षरता दर की बात की जाये तो यह उतरोत्तर वृद्धि की ओर है। भारत की कुल जनसंख्या की 35 प्रतिशत आबादी युवाओं की है। आज के समय में 91 प्रतिशत शहरी युवा साक्षर हैं। 1962 में युवाओं की साक्षरता दर 36 प्रतिशत थी जो 2011 में बढकर 86.1 प्रतिशत हो गयी। युवतियों में साक्षरता दर 81.8 प्रतिशत है। भारत में ग्रामीण युवाओं की साक्षरता दर 83.7 प्रतिशत है, वहीं शहरी युवाओं की साक्षरता दर 91.4 प्रतिशत है। भारत में बच्चा करीब साढ़े तीन साल की उम्र में के.जी. में पढ़ाई शुरू करता है। प्री-स्कूल या नर्सरी की पढ़ाई लगभग ढाई साल की उम्र में शुरू हो जाती है। उच्च शिक्षा की बात करें तो युवतियों (28.5 प्रतिशत) की तुलना में युवाओं (17.5 प्रतिशत) की स्थिति (2016-17 एवं 2011-2012 के आँकड़ों की तुलना के आधार पर) अब दयनीय हो रही है। पहले बालिकाओं के लिए नर्सिंग, गृह विज्ञान, आदि पढ़ाये जाते थे। उस दौर में इंजीनियरिंग, चिकित्सा आदि क्षेत्र में इनकी भागीदारी नहीं के बराबर थी। लेकिन, समय परिवर्तन के साथ ही उनके उच्च शिक्षा में आने पर बदलाव आया। अब बालिकाएँ सामान्य शिक्षा से हटकर व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा की ओर अग्रसर हो रही हैं। पिछले पाँच वर्षों की बालिका शिक्षा की तुलना करें तो बालिकाओं में बी.एससी. (नर्सिंग) के अध्ययन के प्रति गिरावट आई है, वहीं इस क्षेत्र में लड़कों की सहभागिता 9.3 प्रतिशत बढ़ी है। पी.एचडी. करने वालों की श्रेणी में भी लड़कों से आगे अब लड़कियाँ आ रही हैं। पी.एचडी. पूरी करने वाली लड़कियों की संख्या 2016-2017 में 125050 थी जो 2011-2012 की तुलना में 60.5 प्रतिशत ज्यादा है। वहीं पिछले पाँच वर्षों में उच्च शिक्षा के लिए नामांकन कराने वाले लड़के 17.5 प्रतिशत बढे, जबकि लड़कियाँ 28.5 प्रतिशत बढी हैं (दैनिक भास्कर, जनवरी, 2018)।

तालिका 1

भारत में बालक-बालिका की शैक्षिक स्थिति

जनगणना वर्ष	पुरुष (प्रतिशत में)	महिला (प्रतिशत में)	योग (प्रतिशत में)
1961	40.4	15.35	28.3
1971	45.96	21.97	34.45
1981	56.38	29.76	45.57
1991	64.13	30.29	52.21
2001	75.26	53.67	64.84
2011	80.89	64.64	72.99

(स्रोत : शर्मा, मनीषा, 2017)

तालिका 1 से स्पष्ट है कि महिलाओं (बालिकाओं) की शिक्षा में परिवर्तन आया है। जब हम पिछले 50 वर्ष (1961 से 2011) के आँकड़ों की तुलना करें तो बालिकाओं की शिक्षा में सुधार आया है। लेकिन, यह आज भी बालकों से पीछे है। सन्तोषजनक परिणाम यह है कि प्रत्येक दशक में महिलाओं में साक्षरता दर बढ़ी है, भले ही वह पुरुषों से पीछे क्यों न हो। शर्मा (2015) ने जनगणनात्मक अध्ययन का सूक्ष्मतम विश्लेषण किया और पाया कि ग्रामीण क्षेत्र, अकार्यशील जनसंख्या, प्रौढ़ जनसंख्या, निर्धन (आर्थिक रूप से गरीब) और खेतीहर मजदूर महिलाओं में साक्षरता कम है। उन्होंने बाल विवाह, पर्दा प्रथा, भिक्षावृत्ति, कन्या जन्म, सामाजिक मूल्य, परम्परा आदि को महिला साक्षरता में बाधक बताया। चतुर्वेदी (2015) ने महिला सशक्तिकरण व बालिका शिक्षा के रूप में आन्तरिक पहलू जैसे - भय, त्रासदी, असुरक्षा, शारीरिक उत्पीड़न, मानसिक उत्पीड़न, आदि तथा सामाजिक घटनाओं जैसे - भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, महिला हिंसा, यौन शोषण, आदि को बाधक बताया।

जब हम व्यवसाय एवं रोजगार की बात करते हैं तो इसमें भी परिवर्तन आया है। पहले महिलाएँ सेना में नहीं जाती थीं किन्तु विगत पाँच वर्षों (2013-2016) में 1109 महिलाएँ सेना (थल-340, वायु-607, जल-162) में भर्ती हुईं। प्रिंट और विज्यूअल मीडिया में भी युवतियाँ जा रही हैं (कुमार एवं मित्तल, 2017ब)। इसी प्रकार, शहरी कामकाजी युवतियों (20-34 वर्ष) की बात करें तो 1999-2000 में 21.6 प्रतिशत एवं 2011-2012 में 23.6 प्रतिशत युवतियाँ कार्यरत थीं। भारत में 9 प्रतिशत ऐसे स्टार्टअप हैं, जिनकी संस्थापक युवतियाँ हैं। यद्यपि 42 प्रतिशत स्टार्टअप में महिलाएँ प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से नेतृत्व कर रही हैं। यदि कृषि की बात करें तो महिलाओं की सहभागिता यहाँ भी है एवं खेती का 80 प्रतिशत काम महिलाएँ कर रही हैं (तिवारी, 2018)। राजनीति में महिलाओं की सहभागिता की बात करें तो इसमें भी उत्तरोत्तर वृद्धि दर्ज की गयी है। 2005 से 2013 तक देश के विभिन्न राज्यों में हुए विधानसभा चुनावों में 35 वर्ष से कम उम्र की 87 युवतियाँ विधायक बनीं, अर्थात् पाँच प्रतिशत युवतियाँ विधायक बनीं। लेकिन, 2017 तक 35 वर्ष से कम महिला विधायकों की संख्या 122 तक पहुँच गयी। यह लगभग 40 प्रतिशत की बढ़ोतरी है। यदि कुल युवाओं की बात करें तो 2005 से 2013 तक विभिन्न राज्यों में 492 युवा विधायक बने। इससे स्पष्ट है कि जिस क्षेत्र में लड़कों का एकाधिकार था, अब लड़कियाँ भी उस क्षेत्र में अपनी सहभागिता कर रही हैं। रंगराजन एवं अन्य (2011) के अध्ययन परिणाम यह इंगित करते हैं कि महिलाओं में श्रमिक शक्ति सहभागिता अनुपात (लेबर फोर्स पार्टीसिपेशन रेशो) घटा है जिसका कारण शैक्षणिक गतिविधि में उनकी सहभागिता का बढ़ना है। एक रिपोर्ट (आर्गेनाइजेशन ऑफ इकोनोमिक कार्पोरेशन एंड डेवलपमेंट, 2017 का सर्वे) के अनुसार, 15-29 वर्ष की आयु वर्ग के 30 प्रतिशत युवा (युवक एवं युवती) न तो रोजगार में हैं और न ही किसी तरह का प्रशिक्षण या शिक्षा ले रहे हैं। सिंघल (2014) ने भी कहा है कि महिलाओं में शिक्षा की कमी आदि ऐसे सामाजिक मुद्दे हैं जो पंचायती राज व्यवस्था में महिला प्रतिनिधि को

बाधा पहुँचाती है। अत: परिणाम यह इंगित करते हैं कि शिक्षा महिला के जीवन के हर क्षेत्र में सहायक है।

राज्य स्तर पर अध्ययनरत बच्चों की स्थिति

राजस्थान सरकार द्वारा बालिका शिक्षा एवं अन्य वंचित बच्चों को शिक्षा से जोड़ने हेतु 'प्रवेशोत्सव कार्यक्रम' (दिनांक 1 जुलाई 2014 से 15 जुलाई 2014) रखा गया जिसके माध्यम से नव-प्रवेशी विद्यार्थियों की संख्या 4 लाख 921 हुई। प्राथमिक विद्यालयों में शत-प्रतिशत प्रवेश का लक्ष्य हासिल करने और बीच में पढ़ाई छोड़ देने का अनुपात घटाने के निर्णय के अन्तर्गत सीटीएस - 2010 में चिह्नित 2 वर्ष की आयु वाले बच्चों में तथा वर्ष 2014-2015 में 6 वर्ष की आयु पूर्ण करने वाले 13 लाख 24 हजार बालक-बालिकाओं के लक्ष्य के विरुद्ध 791484 बच्चों का विद्यालय में प्रवेश कराया गया। सी.टी.एस. 2010 में चिह्नित 3 वर्ष की आयु वाले तथा स्कूल से वंचित 4 लाख 24 हजार 642 बच्चों में से 1 लाख 77 हजार 270 बच्चों को विद्यालयों में नामांकित कराया गया। सत्र 2014-15 में सी.टी. एस. - 2010 के शेष रहे 6-14 वर्ष आयु वर्ग के शिक्षा से वंचित बालक-बालिकाओं को एवं सत्र के दौरान शाला त्याग करने वाले 129984 बालक-बालिकाओं को आयुनुरूप कक्षा में नामांकित कराया गया (सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान, जयपुर, 2014)। राजस्थान में बालिका शिक्षा एवं प्रशिक्षण हेतु एस.टी.सी. विशेष बैच/महाविद्यालय, बी.एड. विशेष बैच/महाविद्यालय, शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण विशेष बैच/महाविद्यालय, खेलकूद के प्रशिक्षण हेतु विशेष बैच/संस्था, विशेष औद्योगिक प्रशिक्षण ट्रेड, महिला औद्योगिक प्रशिक्षण, आदि की विशेष व्यवस्था है।

तालिका 2

राजस्थान में ग्रामीण व शहरी जनसंख्या के अनुसार बालक व बालिका का साक्षरता दर

जनगणना वर्ष	यौन के आधार पर साक्षरता दर (प्रतिशत में)		स्थानीयता के आधार पर साक्षरता दर (प्रतिशत में)		यौन एवं स्थानीयता के संयुक्त आधार पर साक्षरता दर (प्रतिशत में)			
	पुरुष	महिला	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण पुरुष	ग्रामीण महिला	शहरी पुरुष	शहरी महिला
2001	75.7	43.9	55.3	76.2	72.2	37.3	86.5	64.7
2011	79.2	52.1	61.4	79.7	76.2	45.8	87.9	70.7

(स्रोत : भारत की जनगणना - 2001 एवं 2011)

तालिका 2 से स्पष्ट है कि वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में पुरुष एवं महिला दोनों की साक्षरता दर बढ़ी है, लेकिन महिला साक्षरता दर पुरुषों से कम पायी गयी है। इसी प्रकार, ग्रामीण-शहरी जनसंख्या की तुलना के आधार पर ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में साक्षरता दर वर्ष 2001 की तुलना में वर्ष 2011 में बढ़ी है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्र की साक्षरता दर

शहरी क्षेत्र से कम पायी गयी है। ग्रामीण महिलाओं की शैक्षिक स्थिति सबसे दयनीय है जबकि शहरी महिलाओं की स्थिति शिक्षा के मामले में थोड़ी ठीक है। यह परिणाम स्पष्ट करते हैं कि आज की शिक्षा शहरों और उप-शहरों में ही सीमित होकर रह गयी है। इसका कारण यह है कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के मध्य सम्प्रेषण अर्थात् वैचारिक आदान-प्रदान का अभाव है। शहर से शिक्षक प्रतिदिन विद्यालय आते-जाते हैं। वे यहाँ रहना नहीं चाहते हैं क्योंकि यहाँ रहने के लिए एवं विद्यालय परिसर में सुविधाओं का अभाव है। यहाँ पदस्थ शिक्षक लम्बे समय तक अनुपस्थित रहते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका विद्यालय एवं शिक्षिकाओं की सीमित संख्या होने के कारण ग्रामीण बालिकाएँ पठन-पाठन हेतु स्वयं को असमर्थ पाती हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में बालिका शिक्षा के महत्व को लेकर जागरूकता का अभाव एक प्रमुख कारण है। गोयल (2015) ने कहा है कि महिला-पुरुष में समानता को देखते हुए गाँवों में विशेष बालिका विद्यालय, महिला महाविद्यालय तथा महिला तकनीकी संस्थान खोलने की आवश्यकता है ताकि ये पुरुषों के समकक्ष आ सकें।

जाट एवं चौधरी (2014) ने 2003-2004 के सकल नामांकन दर (ग्रॉस इनरोलमेंट रेट, 2003-2004) के आधार पर बताया है कि कक्षा 1-5 में 123.89, कक्षा 6-8 में 68.95, कक्षा 9-10 में 37.16 एवं उच्च शिक्षा में 4.63 प्रतिशत की सहभागिता रही है। यह तुलना सामान्य जनसंख्या की नामांकन दर से की जाये तो क्रमशः 108.50, 70.51, 51.65 एवं 7. 96 पायी गयी, जो जनजाति समाज के अध्ययनरत सभी कक्षा (प्राथमिक शिक्षा को छोड़कर) के छात्रों में अवनति को प्रदर्शित करता है।

बालिकाओं के लिए साइकल वितरण, बालिका छात्रावास सुविधा, इन्दिरा प्रियदर्शिनी पुरस्कार, गार्गी पुरस्कार, आदि जनजातीय बालिकाओं को शिक्षा से जोड़ने के लिए अहम् भूमिका निभा रहे हैं। राजस्थान राज्य में लगभग 200 शारदे बालिका छात्रावास अवस्थित हैं, जो जनजातीय बालिकाओं को शिक्षित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

तालिका 3 से स्पष्ट है कि राजस्थान के अधिकांश जिलों में बालकों की तुलना में बालिकाओं की संख्या में वृद्धि हुई है। कुछ जिलों (जैसे बाँसवाड़ा, उदयपुर एवं डूंगरपुर) में बालकों की तुलना में बालिकाओं की संख्या घटी है। इस ह्रास का कारण यह है कि इन जिलों में जनजातीय जनसंख्या अधिक है। लेकिन अब ये धीरे-धीरे शिक्षित हो रहे हैं। इन क्षेत्रों में बालकों की शिक्षा भी पहले सन्तोषजनक नहीं थी, बालिकाएँ तो शिक्षा से और भी दूर थीं। बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कई सरकारी कार्यक्रम एवं योजनाएँ हैं जिससे ये धीरे-धीरे शिक्षा की ओर बढ़ रहे हैं। सरकार द्वारा जनजातीय छात्रों के विकास के लिए उच्च शिक्षा सहायता, निःशुल्क स्कूटी वितरण योजना, बोर्ड एवं विश्वविद्यालय में प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण होने पर आर्थिक सहायता और छात्र गृह किराया योजना के अन्तर्गत लाभ दिया जाता है। इसके बावजूद जनजातीय छात्रों की शिक्षा में सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त नहीं हुए हैं।

तालिका 3
राजस्थान के जिलेवार बालक-बालिकाओं में नामांकन दर (सत्र 2017-2018) एवं अन्तर

जिला	स्कूलों की संख्या	नामांकित बालकों की संख्या	नामांकित बालिकाओं की संख्या	कुल योग	बालिकाओं में वृद्धि या ह्रास (-)
अजमेर	1314	36510	48367	84877	11857
नागौर	2237	46335	57522	101857	11187
अलवर	2037	53336	63792	117128	10456
जयपुर	2534	46926	57449	104375	10523
भीलवाड़ा	2272	50522	58437	108959	7915
चुरू	883	26894	34669	61563	7775
भरतपुर	1153	27880	35516	63396	7636
पाली	1270	39548	46708	86256	7160
दौसा	1113	20520	27220	47740	6700
जोधपुर	2837	46527	52598	99125	6051
करौली	1048	19156	24469	43625	5313
सवाई माधोपुर	731	13680	19272	32952	5592
टोंक	1076	18642	24906	43548	6264
बांसवाड़ा	2205	40694	39779	80473	-915
उदयपुर	3186	60842	60330	131172	-512
डूंगरपुर	1857	34741	34635	69376	-106

(स्रोत : माध्यमिक शिक्षा विभाग, जयपुर : राजस्थान सरकार (2016-2017 एवं 2017-2018) के माध्यमिक विद्यालयों की नामांकन सूची के रिकार्ड के आधार पर)

राजस्थान के सरकारी स्कूलों में पिछले दो सत्रों के नामांकन के परिणाम यह स्पष्ट करते हैं कि कहीं छात्राएँ बढ़ी हैं तो कहीं घटी हैं। पिछले साल की अपेक्षा इस बार करीब चार हजार बच्चे कम हुए हैं। ये बच्चे जयपुर (स्कूल - 2534, 2016-2017 में नामांकन - 108149, 2016-2017 में नामांकन - 104390), दौसा (स्कूल - 1113, 2016-2017 में नामांकन - 48844, 2016-2017 में नामांकन - 47742), श्रीगंगानगर (स्कूल - 1450, 2016-2017 में नामांकन - 51440, 2016-2017 में नामांकन - 50965), बाड़मेर (स्कूल - 4081, 2016-2017 में नामांकन - 159274, 2016-2017 में नामांकन - 158723) एवं जैसलमेर (स्कूल - 1003, 2016-2017 में नामांकन - 29995, 2016-2017 में नामांकन - 29747) में कम हुए हैं। जयपुर में बच्चों की संख्या कम होने की वजह निजी स्कूलों की तरफ बच्चों की रुचि होना है क्योंकि यह माना जाता है कि निजी विद्यालयों में अधिक एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिलती है। वहीं अलवर (स्कूल - 2037, 2016-2017 में नामांकन - 114073, 2016-2017 में नामांकन - 117512), भीलवाड़ा (स्कूल - 22272, 2016-2017 में नामांकन - 107687, 2016-2017 में नामांकन - 109004), चित्तौड़गढ़ (स्कूल - 1379, 2016-2017 में नामांकन - 62812, 2016-2017 में नामांकन - 66492), चुरू (स्कूल - 883, 2016-2017 में नामांकन - 58769, 2016-2017 में नामांकन - 61571), धौलपुर

(स्कूल - 842, 2016-2017 में नामांकन - 48448, 2016-2017 में नामांकन - 52231), करोली (स्कूल - 1048, 2016-2017 में नामांकन - 41048, 2016-2017 में नामांकन - 43630), नागोर (स्कूल - 2237, 2016-2017 में नामांकन - 102645, 2016-2017 में नामांकन - 103863), पाली (स्कूल - 1270, 2016-2017 में नामांकन - 84249, 2016-2017 में नामांकन - 86269) एवं उदयपुर (स्कूल - 3186, 2016-2017 में नामांकन - 118102, 2016-2017 में नामांकन - 121178) ऐसे जिले हैं जहाँ बच्चों की नामांकन दर बढ़ी है। राजस्थान में पिछले सत्र के 2201115 बच्चों के मुकाबले इस बार नामांकित बच्चों की संख्या 2233562 हो गयी है। आठवीं कक्षा तक के ताजा आँकड़ों में जिलेवार यह खुलासा हुआ है कि मौजूदा सत्र में लड़कों की तुलना में 144472 बेटियों के नामांकन ज्यादा हुए हैं। हालांकि आदिवासी इलाके उदयपुर, डूंगरपुर और बाँसवाड़ा में मौजूदा सत्र में बेटियों की तुलना कक्षा आठ तक के बालकों की तुलना में अपेक्षाकृत कम है। देशमुख (2019) ने भी बताया है कि विभिन्न सुधार कार्यक्रमों के बावजूद निम्न/न्यून सामाजिक-आर्थिक स्तर के रहते महिलाओं की शिक्षा एवं रोजगार में आशान्वित प्रगति नहीं हुई है।

तालिका 4
राजस्थान के राज्य स्तरीय राजकीय (सरकारी) विश्वविद्यालयों में वर्ष 2011-12 में सामान्य उच्चतर शिक्षा में नियमित (गैर-नियमित/प्राइवेट/दूर शिक्षा को छोड़कर) विद्यार्थियों की नामांकन स्थिति

विश्वविद्यालय	अ.जा.		अ.ज.जा.		अ.पि.वर्ग		अल्पसंख्यक		सामान्य		योग		
	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा	योग
महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर	9897 (13.14)	4407 (5.85)	2812 (3.73)	944 (1.25)	21064 (27.98)	9764 (12.97)	1258 (1.67)	1282 (1.70)	11099 (14.74)	12767 (16.96)	46130 (61.27)	29164 (38.73)	75294 (100)
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर	247 (3.50)	336 (4.77)	17 (0.24)	22 (0.31)	1159 (16.45)	1054 (14.96)	28 (0.40)	11 (0.16)	1283 (18.21)	2890 (41.01)	2734 (38.80)	4313 (61.20)	7047 (100)
म.गं.सिं.विश्वविद्यालय, बीकानेर	6446 (10.04)	3733 (5.82)	379 (0.59)	333 (0.52)	16793 (26.14)	14094 (21.94)	1216 (1.89)	784 (1.22)	9701 (15.11)	10664 (16.60)	34535 (53.76)	29708 (46.24)	64243 (100)
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा	6088 (12.38)	3221 (6.54)	6902 (14.03)	4138 (8.41)	10466 (21.27)	5771 (11.73)	1227 (2.49)	753 (1.53)	3922 (7.97)	6706 (13.64)	28605 (58.15)	20589 (41.85)	49194 (100)
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर	22367 (8.71)	14426 (5.62)	17560 (6.84)	10819 (4.21)	63767 (24.84)	55481 (21.62)	2713 (1.06)	1689 (0.66)	34922 (13.61)	32928 (12.83)	141329 (55.06)	115343 (44.94)	256672 (100)
मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर	3258 (5.73)	2566 (4.51)	11452 (20.15)	7307 (12.85)	7441 (13.10)	6058 (10.66)	536 (0.94)	840 (1.48)	7291 (12.83)	10096 (17.76)	29978 (52.74)	26867 (47.26)	56845 (100)
योग	48303 (9.48)	28689 (5.63)	39122 (7.68)	23563 (4.62)	120690 (23.69)	92222 (18.10)	6978 (1.37)	6359 (1.25)	68218 (13.39)	76051 (14.93)	283311 (55.63)	226984 (44.37)	509295 (100)

(स्रोत : बैरवा, हीरालाल (2014)
(योग/कुल योग में वास्तविक योग से भिन्न हो सकता है, क्योंकि सम्बन्धित साहित्य (शोत्रपत्र) में यही उल्लेख है। कोष्ठक में दिये गये प्रतिशत वर्तमान शोधार्थी द्वारा गणना पर आधारित हैं)

तालिका 4 के परिणाम इंगित करते हैं कि उच्च शिक्षा के मामले में राजस्थान में अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति एवं अल्पसंख्यक समुदाय की बालिकाओं की शैक्षिक स्थिति दयनीय है। तुलनात्मक रूप से अन्य पिछड़ा वर्ग एवं सामान्य वर्ग की बालिकाएँ

शैक्षिक रूप से सुदृढ़ हैं। सामान्य समुदाय में लड़कियों की स्थिति इतनी अच्छी है कि पूरे राजस्थान में लड़कों से भी आगे हैं। अर्थात् उच्च जाति की छात्राएँ अन्य सभी समुदाय के छात्र और छात्राओं से बेहतर हैं। जनजातियों में साक्षरता दर धीरे-धीरे बढ़ी है। लेकिन, जातियों के शिक्षा-दर के आँकड़ों से तुलना की जाये तो राजस्थान एवं अखिल भारतीय स्तर पर जनजातियों में शिक्षा-दर कम ही है। अन्य समुदायों की तुलना की जाये तो राजस्थान में अल्पसंख्यक, अनुसूचित जाति एवं अनुसचित जनजातियों में शिक्षा-दर कम ही है। कोटा एवं उदयपुर में जनजातीय छात्र-छात्राओं का तुलनात्मक रूप से अधिक होने का कारण है कोटा क्षेत्र में मीणा जनजाति का अत्यधिक होना एवं उनका शैक्षिक गतिविधियों में बढ़-चढ़ कर भाग लेना। इसी प्रकार, उदयपुर जनजातीय बाहुल्य क्षेत्र होने के कारण यहाँ के जनजाति छात्र निकट एवं स्थानीय स्तर के होने के कारण उच्च शिक्षा में आ रहे हैं, लेकिन इनकी जनसंख्या की तुलना में इनका नामांकन दर सन्तोषजनक नहीं है। हिंगड़ (2014) ने एक शैक्षिक संस्थान का अध्ययन किया और पाया कि अनुसूचित जनजाति के लड़के एवं लड़कियों में उच्च शिक्षा में नामांकन के प्रति रुचि बढ़ी है। 2011-2012 में राजस्थान में अवस्थित छ: विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं का सर्वेक्षण किया गया और पाया गया कि सम्पूर्ण नामांकित छात्रों में 44.37 प्रतिशत युवतियाँ थीं (बैरवा, 2014)। जैन (2011) ने पाया कि आज जनजातीय बालिकाओं की शैक्षिक स्थिति मजबूत हो रही है। इनके अध्ययन के अनुसार, लगभग 21 प्रतिशत जनजातीय बालिकाएँ स्नातक एवं स्नातकोत्तर उत्तीर्ण हैं। यह योजना अभी शैशवावस्था में है जो बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने में मील का पत्थर साबित होगी। साहू (2019) ने जनजातीय क्षेत्र में शिक्षा की स्थिति का अध्ययन किया और पाया कि अधिकांश जनजातियाँ पहाड़ी क्षेत्रों में रहती हैं तथा ये लोग गरीबी के कारण और स्थानीय विद्यालयों में नाम मात्र की पढ़ाई होने के कारण निरक्षर रह जाते हैं। अत: स्पष्ट है कि जनजातीय क्षेत्रों में निरक्षरता और न्यून शिक्षा व्याप्त है।

तालिका 5
राजस्थान (2003-2004) में कुल नामांकन

कक्षा	सामान्य जनसंख्या (प्रतिशत में)
1 से 5	108.17
6 से 8	70.51
9 से 10	51.65
उच्च शिक्षा	7.96

(स्रोत : जाट, लालाराम एवं चौधरी, कृष्ण कुमार, 2014)

बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ योजना

बेटी बचाओ-बेटी पढ़ाओ योजना भारत सरकार की एक योजना है। यह योजना भारत के सभी राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में चल रही है। भारत सरकार द्वारा सभी राज्यों

के लिए इस दौरान 80.67 करोड़ रु. जारी किये गये। राजस्थान राज्य के इस अभियान के माध्यम से पिछले चार वर्ष में 7.27 करोड़ रु. जारी किये गये।

तालिका 6
वर्षवार आवंटित राशि

क्रम सं.	वर्ष	जारी राशि (करोड़ में)
1	2014-2015	1.15
2	2015-2016	3.57
3	2016-2017	0.36
4	2017-2018	2.18

(स्रोत: महिला अधिकारिता विभाग, जयपुर : राजस्थान सरकार (2017-2018) के आवंटित राशि के रिकार्ड।)

जनजाति आश्रम छात्रावास

जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग की ओर से सिरोही जिले के नौ राजकीय जनजाति क्षेत्रीय आश्रम छात्रावास एवं खेल छात्रावास की मरम्मत एवं सुविधा विकास कार्य के लिए 74.67 लाख रु. जारी किये गये। इस प्रकार, बालक आश्रम छात्रावास और बालक खेल छात्रावास पर 63.89 लाख रुपये एवं बालिका आश्रम छात्रावास पर 10.76 लाख रुपये राशि का आवंटन हुआ (तालिका 6)। दूसरे शब्दों में, जनजातीय बालिकाओं के अध्ययन और छात्रावास पर 16.84 प्रतिशत खर्च हुआ। आवंटित राशि यह इंगित करती है कि लगभग 50 प्रतिशत महिला की आबादी पर लगभग 16.84 राशि का आवंटन हुआ। इसी प्रकार, छात्र-छात्राओं की संख्या की तुलना की जाये तो 29.6 प्रतिशत बालिकाएँ ही छात्रावास में रहती हैं। अत: जनजातीय समुदाय की बालिकओं की संख्या एवं आवंटित राशि जनजातीय समुदाय की बालिकाओं से कम है।

तालिका 7
वित्तीय वर्ष 2017-2018 में छात्रावासवार आवंटित राशि

स्थान	छात्रों की संख्या			जारी राशि
	बालक	बालिका	कुल	
किवरली बालक आश्रम छात्रावास	50	0	50	7.91 लाख
सांतपुर बालिका आश्रम छात्रावास	0	75	75	3.95 लाख
सांतपुर बालक खेल छात्रावास	50	0	150	4.35 लाख
सांतपुर बालक आश्रम छात्रावास	100	0	100	10.04 लाख
ओर बालक आश्रम छात्रावास	75	0	75	8.04 लाख
गिरिवर बालक आश्रम छात्रावास	130	0	130	9.96 लाख
मानुपर बालिका आश्रम छात्रावास	0	150	150	6.81 लाख
सियावा बालक आश्रम छात्रावास	50	0	50	10.02 लाख
मीनतलेटी बालक आश्रम छात्रावास	80	0	80	13.59 लाख
कुल	535	225	760	74.67 लाख

(स्रोत: भवानी सिंह देथा, आयुक्त, जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग, जयपुर : राजस्थान सरकार (2017-2018) के आवंटित राशि के रिकार्ड।)

सुकन्या समृद्धि योजना

डाक विभाग की सुकन्या समृद्धि योजना बालिका के प्रोत्साहन को लेकर है। इस योजना में एक वर्ष में कम से कम 1000 एवं अधिक से अधिक डेढ़ लाख जमा किये जा सकते हैं। बालिका के वयस्क होने पर 8.1 प्रतिशत की दर से ब्याज का भुगतान किया जाता है। यह राशि बालिका के वयस्क होने पर उसके विवाह या उसकी उच्च शिक्षा के अध्ययन में दिया जाता है।

मुख्यमन्त्री राजश्री योजना

राजस्थान सरकार द्वारा मुख्यमन्त्री राजश्री योजना पूरे राजस्थान में लागू है। इस योजना का लाभ पुत्री के जन्मोपरान्त दो हजार पाँच सौ रुपये दिये जाते हैं। इस योजना का उद्देश्य कन्या भ्रूण हत्या को रोकना, पुत्रियों की पढ़ाई, स्वास्थ्य एवं देखभाल है। इसके अलावा इसी योजनान्तर्गत पहले वर्ष के टीकाकरण पर 2500 रु., पहली कक्षा में प्रवेश पर 4000 रु., कक्षा 6 में प्रवेश पर 5000 रु., कक्षा 10 में प्रवेश पर 11000 रु. एवं कक्षा 12 में प्रवेश पर 25000 रु. दिये जाते हैं।

तालिका 8
राजश्री योजना के अन्तर्गत दी जाने वाली राशि

राशि देने का समय	दी जानेवाली राशि
बिटिया के जन्म के उपरान्त	2500.00 रु.
पहला जन्मदिन	2500.00 रु.
राजकीय विद्यालय में पहली कक्षा में प्रवेश	4000.00 रु.
छठी कक्षा में प्रवेश	5000.00 रु.
दसवीं कक्षा में प्रवेश	11000.00 रु.
बारहवीं कक्षा में प्रवेश	25000.00 रु.

(स्रोत: महिला अधिकारिता विभाग, जयपुर : राजस्थान सरकार (2017-2018) के आवंटित राशि के रिकार्ड।)

भारतीय प्रबन्धन संस्थान द्वारा महिला उद्यमिता योजना

यह योजना देश भर की महिलाओं के लिए है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत महिलाओं को व्यवसायिक आत्मनिर्भर (वूमन इंटरप्रिन्योरशिप) बनाने हेतु उन्हें व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं कौशल पर विशेष जोर दिया जाता है। इसे विकसित करने के लिए महिलाओं को 30 हजार छात्रवृत्ति दिये जाने का प्रस्ताव है। यह कार्यक्रम 10 कोर्स में बँटा है एवं इसकी अवधि एक वर्ष रखी गयी है। यह कार्यक्रम वर्तमान में नि:शुल्क है, लेकिन भविष्य में इस अध्ययन हेतु 10 हजार रु. शुल्क लिया जा सकता है। इस कार्यक्रम का पहला सत्र 2018 में प्रारम्भ हुआ।

खेल में सहभागिता सम्बन्धी कार्यक्रम

खेलकूद की बात की जाये तो 2016 के ओलम्पिक खेलों में महिलाओं की हिस्सेदारी 46 प्रतिशत रही। तब 66 पुरुषों के मुकाबले 54 लड़कियाँ थीं। 2004 में 48 के मुकाबले 25 लड़कियाँ थीं। इसी प्रकार, राजीव गाँधी खेल रत्न अवार्ड अब तक 41.4 प्रतिशत एवं अर्जुन अवार्ड 26.7 प्रतिशत युवतियों को मिला है। अत: राष्ट्रीय खेल एवं पुरस्कार पाने में महिलाएँ पीछे रही हैं। राजस्थान में जिला स्तरीय महिला खेलकूद प्रतियोगिता उदयपुर, पाली, जोधपुर एवं जयपुर में 4 से 9 अक्टूबर 2014 तक 12 खेलों में आयोजित की गयी, जिसमें 24709 बालिकाओं ने भाग लिया (सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान, जयपुर, 2014)। खेलो युवा कार्यक्रम भारत सरकार की एक योजना है जिसे देश के सभी छात्रों में प्रतियोगिता, मनोरंजन एवं खेल को बढ़ावा देने के लिए किया गया है। इसके अन्तर्गत कुल 16 खेल आते हैं। इन खेलों में तीरन्दाजी, एथलेटिक्स, बैडमिंटन, बास्केटबॉल, बॉक्सिंग, जिम्नास्टिक, हॉकी, जूडो, कबड्डी, खो-खो, शूटिंग, स्वीमिंग, वॉलीबॉल, वेटलिफ्टिंग और कुश्ती सम्मिलित हैं। इसमें 17 वर्ष से कम उम्र के छात्र भाग लेते हैं। इसमें भारत के सभी राज्यों के बच्चे भाग लेते हैं। इस बार राजस्थान से 140 खिलाड़ी खेलने जा रहे हैं। यह खेल प्रतिभाशाली खिलाड़ियों के चुनाव का माध्यम है। इसमें सफल प्रतिभाशाली खिलाड़ियों को खोज कर उन्हें अगले आठ साल तक प्रति वर्ष पाँच लाख रुपये की सहायता राशि दी जाती है।

राजस्थान की जनजातियों के विकास के लिए व्यक्तिगत प्रयास, जन-आन्दोलन, स्वैच्छिक संगठन, स्वयं सहायता समूह एवं सहकारी समिति की भूमिका

इनरव्हील क्लब, महिला शाखा, वूमेन फॉर रिफॉर्म, रेगर युवा संगठन, जैन सोशल ग्रुप (कल्पतरु), जैन जागृति सेंटर, डांगी सेवा संस्थान, ओसवाल महिला मंच, आदि ट्रस्ट, एन.जी.ओ. एवं स्वयंसेवी संगठन हैं जो अपने समुदाय विशेष के विकास के लिए कार्य करते हैं। इस प्रकार के संगठन पूरे राजस्थान में फैले हैं। इन संगठनों के द्वारा बालिका सशक्तिकरण विभिन्न माध्यमों से किया जाता है। इस संस्थान के माध्यम से बालिकाओं के लिए खेलकूद आयोजन, बालिका शैक्षणिक कार्यक्रम, लघुकालीन एवं पूर्णकालीन व्यवसायिक प्रशिक्षण, आदि आयोजित किये जाते हैं।

बालिका शिक्षा के लिए सामान्य योजना

आज लगभग आधी आबादी नारियों की है, जो राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक विकास में अपना योगदान दे रही हैं। सरकारी स्तर पर विभिन्न योजनाएँ, जैसे - किशोरी शक्ति योजना, स्वयंसिद्ध योजना, स्वाधार योजना, महिला उद्यमियों हेतु ऋण योजना, जीवन भारती महिला सुरक्षा योजना, कस्तूरबा गाँधी विशेष बालिका विद्यालय योजना, वन्दे मातरम् योजना, जननी सुरक्षा योजना, आशा योजना, आँगनवाड़ी विशेष बीमा योजना, विशेष

आवासीय विद्यालय योजना, बालिका शिक्षा प्रोत्साहन योजना, इकलौती कन्या छात्रवृत्ति योजना आदि बालिकाओं एवं महिलाओं के लिए बनी हैं। शालापर्व शिक्षा में 3 से 6 वर्ष के 1034267 बच्चों (बालिकाओं सहित) को लाभान्वित किया गया (सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान, जयपुर, 2014)। संक्षेप में, सरकार द्वारा भारत की महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा के क्षेत्र में सर्व शिक्षा अभियान, कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी.पी.ई.पी.), महिला समाख्या (एम.एस.), सम्पूर्ण साक्षरता अभियान, अनौपचारिक शिक्षा प्रणाली, शिक्षाकर्मी अभियान (एस.के.पी.), आदि महत्वपूर्ण हैं (शर्मा, 2017)। राजस्थान में महिलाओं हेतु आरक्षण, शुल्क रियायत, समाज कल्याण विभाग द्वारा छात्रवृत्ति, छात्रावास, आदि की सुविधा दी गयी है। ग्रामीण क्षेत्र के निवासी जनसंचार एवं वैश्वीकरण के प्रभाव से सशक्त बन रही हैं। कुमार (2017अ) ने बताया है कि इंटरनेट, समाचार पत्र, कम्युनिटी रेडियो, आदि के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले शैक्षिक रूप से सशक्त हो रहे हैं। ई.आर.नेट (एजूकेशन एंड रिसर्च नेटवर्क), ज्ञान दर्शन, आदि कार्यक्रमों के माध्यम से भी ग्रामीण युवा शिक्षित हो रहे हैं। आजादी के बाद से देश में शिक्षा के स्तर को बढ़ावा देने के लिए कई समितियों एवं कार्यक्रमों का निर्माण किया गया है, जो आज तक जारी है। इन कारणों से शिक्षा के क्षेत्र में सकारात्मक लाभ मिले हैं लेकिन वह सीमाबद्ध होकर रह गये हैं। जिस स्तर से शिक्षा का विकास होना चाहिए था वह नहीं हो पाया।

बालिका शिक्षा में बाधाएँ

भारत में बालिका शिक्षा के कई बाधक तत्व हैं जिनमें विवाह एक प्रमुख कारण है। 1995 में जहाँ ग्रामीण युवतियों का विवाह 19 वर्ष की औसत उम्र में होता था वहीं 2014 में लड़कियों के विवाह की औसत उम्र 21.8 थी। वर्तमान समय में ग्रामीण लड़कियों के विवाह की औसत उम्र 22.3 वर्ष है। आज लड़कियों के विवाह की उम्र में सुधार आया है। विवाह के मामलों में शहर की लड़कियों की स्थिति ठीक है। शहरी युवतियों की शादी की औसत उम्र 20.3 वर्ष से बढकर 23.2 वर्ष हो गयी है। लड़कियों के विवाह की उम्र के मामले में केरल एक ऐसा राज्य है जहाँ लड़कियों की विवाह औसतन 24.1 वर्ष में हो रही है। वहीं लड़कों में विवाह की उम्र औसतन 22.8 वर्ष (भारत की जनगणणा, 2011) है जो पहले 22 वर्ष (भारत की जनगणणा, 2001) थी। अत: कहा जा सकता है कि अधिक उम्र में विवाह होने के कारण ही केरल में बालिकाओं सहित कुल व्यक्तियों की साक्षरता दर अधिक है।

विद्यालय में लम्बे समय के अवकाश भी बच्चों की शिक्षा को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं (एजुकेशन रिपोर्टर, 2018)। शर्मा (2017) ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया कि बालिका (विशेषकर जनजातीय समुदाय की) शिक्षा की कम भागीदारी का कारण सामाजिक एवं सांस्कृतिक है, जिसमें महिला के प्रति सामाजिक भेदभाव एवं सांस्कृतिक पूर्वाग्रह प्रमुख कारण हैं। उन्होंने यह भी बताया कि सामान्यत: पुरुष मानते हैं कि यदि महिलाएँ पुरुष के मुकाबले खड़ी होंगी तो समाज का पतन हो जायेगा। अत: पुरुषवादी मानसिकता

बालिका शिक्षा में बाधक है। मेनारिया (2017) ने अपने अध्ययन में बताया कि स्थानीय स्तर पर विद्यालय का नहीं होना, विद्यालय में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव, विद्यालय में ढाँचागत सुविधाओं की कमीं, अपर्याप्त शिक्षक एवं शिक्षण सामग्री, आदि बालिका शिक्षा में बाधक हैं।

शिक्षकों की कमीं भी बच्चों की शिक्षा में बाधक है। राजस्थान के लगभग सभी जिलों में शिक्षकों के पद रिक्त हैं। परिणामस्वरूप बच्चों की पढ़ाई ठीक से नहीं हो रही है। उदयपुर जिले में माध्यमिक स्तर पर 42.22 प्रतिशत पद (शिक्षक के कुल पद - 11172, रिक्त पद - 4717) रिक्त हैं। गोगुंदा के छाली गाँव (जनजातीय बाहुल्य गाँव) में माध्यमिक स्तर के छात्रों को पढ़ाने के लिए कोई शिक्षक नहीं है जबकि यहाँ 210 छात्र (6-10 कक्षा) हैं और यहाँ पर मात्र दो तृतीय श्रेणी शिक्षक हैं। इसी प्रकार, फलासिया के अभिवाड़ा गाँव (जनजातीय बाहुल्य गाँव) में माध्यमिक स्तर के छात्रों को पढ़ाने के लिए गणित, विज्ञान, संस्कृत के कोई शिक्षक नहीं हैं। इसके अलावा हिन्दी, गणित, अंग्रेजी और विज्ञान के तृतीय श्रेणी शिक्षक भी नहीं हैं। आमोड़ गाँव में माध्यमिक स्तर के छात्रों को भूगोल, संस्कृत व गणित को पढ़ाने के लिए कोई शिक्षक नहीं हैं। आवासीय बालिका विद्यालय, उदयपुर नगर में भी अंग्रेजी, संस्कृत एवं उर्दू के शिक्षक नहीं हैं। परिणाम यह इंगित करते हैं कि शिक्षकों की कमीं प्रतिभावान छात्रों के अध्ययन के बाधक बनती है। अत: शिक्षकाभाव छात्रों में शिक्षण के प्रति अरुचि को दर्शाता है (एजूकेशन रिपोर्टर, 2018)।

सिलाईच (2017) ने एक उच्च माध्यमिक विद्यालय की वस्तुस्थिति से अवगत कराया जो कि उदयपुर जिला के कोटड़ा पंचायत के मांडला क्षेत्र में उच्च माध्यमिक विद्यालय है। यहाँ तीन सौ जनजाति बच्चे कक्षा एक से कक्षा बारहवीं तक पढ़ने वाले हैं। शिक्षकों के नाम पर 18 स्वीकृत पद के स्थान पर तीन शिक्षक हैं। कक्षा बारह तक की अध्ययन की व्यवस्था होने के उपरान्त यहाँ पर कमरों की संख्या इनकी संख्या के अनुसार नहीं है। प्रधानाध्यापक का पद रिक्त होने से तृतीय स्तर के शिक्षक प्रधानाध्यापक का पदभार ग्रहण किये हैं। सरकार की ओर से पंखे लगे हैं, लेकिन बिजली नहीं है। यहाँ कक्षा एक से पाँच तक एक कमरा, छ: और सात के लिए एक कमरा, आठ और नौ के लिए एक कमरा, दसवीं कक्षा के लिए एक कमरा एवं ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के लिए एक कमरा है। कक्षा एक से पाँच तक के बच्चों को इसी विद्यालय के बारहवीं कक्षा के बच्चे पढ़ाते हैं। कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं को पढ़ाने के लिए कोई व्याख्याता नहीं है। अत: इन्हें कोई नहीं पढ़ाता है। कमरों का और शिक्षकों का अभाव यहाँ की मूल समस्या है। इस विद्यालय का फर्श टूटा रहने के कारण बच्चे फर्श पर बैठकर पढ़ते हैं। माध्यमिक से उच्च माध्यमिक में उत्क्रमित होने के बावजूद बजट के अभाव के कारण बोर्ड अभी भी पुराना ही माध्यमिक विद्यालय का लगा है। कमोबेश यही स्थिति लगभग हर ग्रामीण क्षेत्र के जनजातीय विद्यालयों की है। जैन (2011) ने पाया कि कमजोर आर्थिक स्थिति, स्थानीय स्तर पर स्कूल का अभाव, जल्दी विवाह, शिक्षा के प्रति नकारात्मक मनोवृत्ति शिक्षा में बाधक बनती है।

निष्कर्ष

अध्ययन के परिणाम यह इंगित करते हैं कि भारतीय संविधान एवं कानून, सरकारी नीति एवं कार्यक्रम, महिला आयोग, मानवाधिकार आयोग, राष्ट्रीय जनसहयोग एवं बाल विकास संस्थान, एन.जी.ओ., प्रभावकारी मीडिया, जैसे - दूरसंचार, टीवी, रेडियो, समाचार पत्र, इंटरनेट, आदि के माध्यम से महिलाओं को विशेष अधिकार, आरक्षण व अन्य संवैधानिक सुविधाएँ दी जा रही हैं जिसका परिणाम है कि बालिकाएँ शिक्षित हो रही हैं। परन्तु, इसे पूर्ण सुधार नहीं माना जा सकता है। क्योंकि ये अभी भी लैंगिक आधार पर बालकों से पीछे हैं।

सन्दर्भ

आर्गेनाइजेशन ऑफ इकोनोमिक कार्पोरेशन एंड डेवलपमेंट (2017) की *सर्वे रिपोर्ट.*

एजूकेशन रिपोर्टर (2018). '28 दिन बाद से शुरू होंगी बोर्ड की परीक्षाएँ, जिले में शिक्षकों के 4747 पद खाली, कैसे करें तैयारी'. *दैनिक भास्कर* (उदयपुर), 31 जनवरी, पृ. 5.

एडिटोरियल (2016). 'फ्री एंड कम्पलशरी स्कूल एजूकेशन'. *जर्नल ऑफ ऑल इंडिया एसोसिएशन फॉर एजूकेशनल रिसर्च,* 28(2), 1-17.

कुमार, दिलीप एवं मित्तल, राहुल (2017अ). 'न्यू मीडिया एंड सस्टेनेबल डेवलपमेंट इन द ट्राइबल एरिया ऑफ इंडिया'. *वन्यजाति,* 65(1), 7-18.

कुमार, दिलीप एवं मित्तल, राहुल (2017ब). 'सामाजिक विकास में भारतीय आदिवासी महिलाओं की भूमिका और मीडिया'. *वन्यजाति,* 65(1), 31-38.

कुसुमाकर, अरुणा (2015). 'महिला सशक्तिकरण में उच्च शिक्षा की भूमिका - एक अध्ययन (धार एवं धाबुआ जिले के विशेष सन्दर्भ में)'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 72-73.

गोयल, गोयल (2015). 'वुमेन एजूकेशन एंड सोशल रिफोर्म'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 65.

चतुर्वेदी, सीता (2015). 'शिक्षा के माध्यम से बदलता भारतीय परिदृश्य (महिला सशक्तिकरण के विशेश सन्दर्भ में)'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 74-77.

जाट, लालाराम एवं चौधरी, कृष्ण कुमार (2014). 'राजस्थान में अनुसूचित जनजाति क्षेत्र से प्रवासन का कारण तथा प्रभाव'. *ट्राइब्स,* 45-46 (1-4), 9-19.

जैन, टीना (2011). *शहरी विकास में जनजातीय महिलाओं का सशक्तीकरण.* जोधपुर : मिनर्वा पब्लिकेशन.

झा, आरसी प्रसाद (2019). 'महिला सशक्तिकरण को प्रभावित करनेवाले कारकों के रूप में कामकाजी महिलाओं की सकारात्मक पहलू व समस्याओं का अध्ययन'. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च एंड एनालाइटिकल रिव्यूज,* 6(1), 250-253.

डावर, बी.एस. (2015). 'महिला सशक्तिकरण में व्यावसायिक शिक्षा का महत्व'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 78-79.

तिवारी, गायत्री (2018). 'खेती का 80 प्रतिशत काम कर रहीं महिलाएँ पर परिवार में बोलने का हक नहीं, मनोरंजन नहीं होने से थमा व्यक्तिगत विकास'. *दैनिक भास्कर* (उदयपुर), 11 जनवरी.

देथा, भवानी सिंह, आयुक्त, जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग, जयपुर : *राजस्थान सरकार (2017-2018) के आवंटित राशि के रिकार्ड.*

देशमुख, वन्दना (2019). 'महिलाएँ और सामाजिक परिवर्तन'. *शोध प्रेषण,* 8 (1)/27, 13-15.

दैनिक भास्कर (2018). 'कितना अन्तर है युवक-युवतियों में'. *दैनिक भास्कर* (उदयपुर), 12 जनवरी, पृ. 10.

परमार, निशाबा डी. (2020). 'महिला सशक्तिकरण की बुनियाद-स्त्री शिक्षा'. *के.सी.जी. जर्नल ऑफ ह्यूमिनिटी,* 42 (दिसम्बर-जनवरी), 1-5.

बैरवा, हीरालाल (2014). 'जनजातीय शैक्षिक विकास एवं संवैधानिक प्रावधान'. *ट्राइब्स,* 45-46(1-4), 78-85.

भारत की जनगणना-2001.

भारत की जनगणना-2011.

महाजन, मनोज और महाजन, सुधीर (2015). 'भारत में साक्षरता : एक सांख्यिकीय अध्ययन (महिला साक्षरता की प्रगति के विशेष सन्दर्भ में)'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 66-69.

महिला अधिकारिता विभाग, जयपुर : *राजस्थान सरकार (2017-2018) के आवंटित राशि के रिकार्ड.*

माध्यमिक शिक्षा विभाग, जयपुर : *राजस्थान सरकार (2016-2017 एवं 2017-2018) के माध्यमिक विद्यालयों की नामांकन सूची के रिकार्ड.*

मेनारिया, विद्या (2017). 'अनुसूचित जनजाति : सामाजिक परिस्थिति और वर्तमान शैक्षिक स्थिति'. *ट्राइब,* 49 (1-2), 63-66.

राय, अपर्णा (2015). 'चैलेंज फोर वुमेन इम्पॉवरमेंट : रोल ऑफ हायर एजूकेशन'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 50-51.

रंगराजन, सी., कौल, पी.आई. एवं सीमा (2011). 'व्हेअर इस दी मिसिंग लेबर फोर्स'. *इकोनोमिक एंड पोलीटीकल वीकली,* 49(23), 17-21.

शर्मा, एल.एन. (2015). 'नीमच जिले में महिला साक्षरता म.प्र. व व भारत की तुलना में कम - एक विश्लेषात्मक अध्ययन'. *दिव्य शोध समीक्षा जर्नल,* विशिष्ट संस्करण (अप्रेल), 70-71.

शर्मा, मनीषा (2017). 'जनजातीय महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु शैक्षिक प्रयास'. *ट्राइब,* 49(1-2), 19-25.

साहू, नीतू (2019). 'ट्रुथ ऑफ पार्शियल एजूकेशन इमंग द ओराँव ट्राइब ऑफ रड़हा पंचायत, कांके ब्लॉक'. *द एशियन मेन,* 13(2), 221-228.

सिलाईच, सुनीति (2017). 'शिक्षा का सच : मांडवा का उच्च माध्यमिक विद्यालय, जहाँ हैं सिर्फ 3 शिक्षक..... जूनियर्स को पढ़ा रहे 12वीं के छात्र', *राजस्थान पत्रिका* (उदयपुर), 21.10.2017, पृ. 6 (पत्रिका प्लस).

सूचना एवं जनसंर्क विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर (2014). *प्रगतिशील राजस्थान : महत्वपूर्ण निर्णय, मुख्य-मुख्य उपलब्धियाँ.* जयपुर : सूचना एवं जनसंर्क विभाग, राजस्थान सरकार.

सिंघल, विपिन कुमार (2014). *पंचायती राज व्यवस्था एवं महिलाएँ - 73वें संविधान संशोधन के सन्दर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन.* (Panchayati Raj Institutions and Women : An Analytical Study with Special Reference to 73rd Amendment) (April 20, 2014). https://ssrn.com/abstract=2427060 or http://dx.doi.org/10.2139/ssrn.2427060

हिंगड़, हंसा (2014). 'अनुसूचित जाति एवं जनजाति के विद्यार्थियों के शैक्षिक उन्नयन में मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, पुस्तकालयों एवं बुकबैंक्स की भूमिका'. *ट्राइब्स,* 45-46 (1-4), 86-92.

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 19-33)

शासकीय सेवानिवृत्त व्यक्तियों की परिवार एवं समाज में भागीदारी का समाजशास्त्रीय अध्ययन (इन्दौर नगर के विशेष सन्दर्भ में)

प्रकाशिनी तिवारी*

सेवानिवृत्त पुरुष एवं महिलाएँ स्वयं को परिवार एवं समाज में एकाकी और उपेक्षित महसूस करते हैं। व्यक्ति की पारिवारिक जिम्मेदारियाँ एवं दायित्व सेवानिवृत्ति के पश्चात् भी बने रहते हैं। सेवानिवृत्त होने पर उन्हें नौकरी से तो छुट्टी मिलती है लेकिन अन्य जिम्मेदारियों से नहीं। उन्हें पारिवारिक-सामाजिक समस्याओं से भी जूझना पड़ता है। औद्योगिकीकरण के साथ सम्पन्नता आती है जो हर आयु वर्ग के व्यक्तियों की सोच तथा विचारों में परिवर्तन करते हुए जीवन के नवीनतम आयामों को जोड़ने के मार्गों को भी प्रशस्त करती है। इन्दौर शहर के विभिन्न स्वरूपों में वर्तमान वैश्वीकरण भी सम्मिलित है जिसका प्रभाव बालवर्ग, युवावर्ग, महिला, पुरुष तथा वयोवृद्ध, वरिष्ठ वर्ग पर स्पष्ट रूप से दिखता है फलस्वरूप वरिष्ठ नागरिक उपेक्षित, निम्न एवं एकाकी जीवन व्यतीत करने के लिए अनपेक्षित रूप से बाध्य हैं। इन बातों का परिवार तथा समाज के साथ बच्चों पर भी नकारात्मक एवं प्रतिकूल प्रभाव दिखाई देता है। सेवानिवृत्ति वरिष्ठजनों के अनुभवों का उपयोग परिवार एवं समाज की उन्नति में लिया जाये तो हो सकता है कि सभ्यता एवं संस्कृति के आयामों को बनाये रखा जा सके।

*विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, कॉम्फीडर्स आइसेक्ट कॉलेज ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज, इन्दौर (म.प्र.).
E-mail: prakashinitiwari1982@gmail.com

भारत की महान सांस्कृतिक धरोहर, परम्पराओं तथा मान्यताओं का विश्व में अपना सर्वोत्तम स्थान है। इस देश की सांस्कृतिक परम्पराओं में से एक अपने वृद्धजन का 'आदर तथा सम्मान' की परम्परा भी रही है। भारतीय इतिहास में ऐसी अनेक घटनाएँ हैं, जिसमें बुजुर्गों तथा वृद्धजनों का सम्मान तथा आदर का गौरवशाली वर्णन किया गया है। इस गौरवशाली परम्परा की वजह से विदेश जाने वाले भी इस महान संस्कृति को नम आँखो से याद करते हैं तथा जीवन पर्यन्त भूल नहीं पाते हैं, क्योंकि इतनी वैभवशाली तथा गौरवशाली परम्परा किसी और देश में नहीं मिल सकती। पाँव छूना, बड़ों से आशीर्वाद लेना आदि विशेषताएँ केवल भारत में ही पायी जाती हैं। मानव के जन्म से 25 वर्ष तक उसके शरीर का विकास पूर्ण रूपेण हो जाता है। 40 वर्ष की अवस्था आने तक उसकी शारीरिक शक्ति धीरे-धीरे कम होने लगती है, इसके कुछ वर्षों पश्चात् शक्ति समाप्त होने लगती है, और व्यक्ति शनैः-शनैः वृद्धावस्था की ओर पहुँच जाता है। यह सच ही है कि समय के साथ शरीर की मशीनरी घिसती जाती है।

प्रकृति के शाश्वत सत्य और शाश्वत नियम के अनुसार मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में वृद्धावस्था जीवन का सन्ध्याकाल है जिसमें व्यक्ति प्रायः स्वयं को पराश्रित, अस्वस्थ, उपेक्षित एवं अनेक प्रकार की कठिनाइयों से ग्रस्त पाता है। वह समाज के एक ऐसे वर्ग में सम्मिलित हो जाता है जो अपने जीवन का एक पड़ाव पूर्ण करने के पश्चात् भी उपेक्षात्मक जीवन व्यतीत करते हैं। उसकी जीवन रूपी लड़ियों में बिखराव आ जाता है। ऐसी दशा में वृद्धावस्था प्रायः एक बोझ बन जाती है।

वर्तमान समय में वैज्ञानिकता तथा भौतिकता की अन्धी दौड़ में प्राचीन मान्यताएँ एवं परम्परागत मूल्य तीव्र गति से परिवर्तित हो रहे हैं जिससे संयुक्त परिवार का विघटन तेजी से हो रहा है। बढ़ती हुई महँगाई, औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, व्यक्तिवादी सोच ने व्यक्ति के परम्परागत सामाजिक मूल्यों जैसे त्याग, स्नेह, परोपकार, सहानुभूति, सहनशीलता इत्यादि को विलुप्त कर दिया है। फलतः परिवार का असहयोगात्मक रुख एवं समाज का विपरीत दृष्टिकोण कुंठा को जन्म देता है। वरिष्ठ वर्ग परिवार तथा समाज द्वारा उपेक्षित होने लगता है और परिवार उसके महत्व को नकारने लगता है (मदन, 1990)।

टक्सन तथा लॉर्ज ने वृद्धों की वास्तिविक स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा है - "वृद्ध लोग एक ऐसे समाजिक वातावरण में रह रहे हैं जो सामर्थ्यता, उपयोगिता और सुरक्षा की भावनाओं के लिए तथा बाद के वर्षों के सुसमायोजन के लिए हितकर नहीं है"।

सामान्यतः अधिकांश परिवारों में यह देखा जाता है कि जब तक व्यक्ति सेवानिवृत्त नहीं हो जाते है, तब तक उन्हें मान-सम्मान प्राप्त होता है। परिवार में सेवानिवृत्त व्यक्ति को तथा उनकी भावनाओं तथा अहमियत नहीं दी जाती है जिसके कारण वरिष्ठजन स्वयं को उपेक्षित या हीन महसूस करने लगते हैं। परिवार के किसी भी कार्य या कार्यक्रम में उनकी पसन्द-नापसन्द को महत्व नहीं दिया जाता है। उनसे किसी भी प्रकार का सलाह-मशविरा नहीं लिया जाता है। उनकी रुचि तक को महत्व नहीं दिया जाता। जाने-अनजाने में उनके साथ दुर्व्यवहार होता है। ऐसी परिस्थिति में वरिष्ठजनों में विवाद की समस्याएँ अत्यधिक तीव्रता से

बढ़ रही हैं। तथापि सामाजिक अस्वीकृति और कुंठा के कारण वे भावनात्मक रूप से टूट जाते हैं। बढ़ती पाश्चात्य सभ्यता, आर्थिक स्तर, स्वास्थ्य, एकाकी परिवार, उपेक्षित व्यवहार इत्यादि के कारण वरिष्ठजन कुंठाग्रस्त होने लगे हैं।

अजेय, अमर, चिरयुवा, चिरंजीवी रहने का सपना मनुष्य पुरातन काल से देखता आ रहा है। समय अपने निशान संसार की समस्त प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, सजीव-निर्जीव इत्यादि पर आवश्यक रूप से छोड़ जाता है। इन चिह्नों की छाप किसी पर शीघ्र तो किसी पर विलम्ब से दिखाई पड़ती है। समय के न जाने कितने पहलू और न जाने कितने आयाम हैं। मनुष्य इन्हीं विभिन्न पहलूओं और आयामों में अपना जीवनचक्र पूर्ण करता है। जीवनकाल का अनुभव समय एवं परिवर्तन की विकसित वृद्धावस्था के रूप में सामने आता है।

मानव जीवन में बहुत कुछ सुन्दर, सार्थक, उपयोगी और चिरन्तन है। वह समस्त परिपक्व अवस्थाओं द्वारा प्रदत्त है। यदि ये अवस्थाएँ नहीं होतीं तो समस्त संसार, सांसारिक रिक्तता, कलात्मक सफलता, सम्पदा, आर्थिक विकास तथा अनेकों श्रेष्ठताओं से वंचित रह जाता। अत: समाज के प्रत्येक वर्ग का प्रत्येक व्यक्ति प्रथम अवस्था तक एक सुनियोजित क्रमानुसार चलता है। मानव जीवन का एक चौथाई समय स्वयं को स्थापित करने में और आधा समय परिवार के कार्यों में सुख की तलाश में खत्म हो जाता है। जीवन के अन्तिम चौथाई भाग में शारीरिक, मानसिक कमजोरी के कारण मनुष्य की क्रियाशीलताएँ घटने लगती हैं। जबकि इसी परिपक्व अवस्था को अधिकतम उत्तरदायित्व का काल माना जाता है। प्रत्येक व्यक्ति की पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक भूमिका पूर्ण रूप से एक सीमा के अन्तर्गत होती है। परिवार सम्बन्धी भूमिकाओं में तब परिवर्तन होने लगता है जब बच्चे स्वयं को आत्मनिर्भर मानकर कार्यों का संचालन करने लगते हैं जिससे वरिष्ठजनों की शारीरिक मानसिक शक्तियों में शिथिलता आने लगती है और वे सांवेगिक परिवर्तन, एकान्त, थकान, निराशा आदि महसूस करने लगते हैं।

ऐसा नहीं है कि सेवानिवृत्ति के पश्चात् जिन्दगी बोझिल, शिथिल और निराशाजनक हो जाती है। यदि कुछ परिवर्तित होता है तो वो है जिम्मेदारियों का स्वरूप। सेवानिवृत्त होने के बाद सेवानिवृत्त व्यक्ति आजीविका तथा भरण-पोषण सम्बन्धी जिम्मेदारियों से चिन्तामुक्त हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो उनकी पारिवारिक, आर्थिक, शारीरिक और मानसिक परिस्थितियाँ किस प्रकार की हैं या किस प्रकार की होंगी, यह सेवानिवृत्ति के पश्चात् उनके जीवन पर निर्भर करता है।

वर्तमान समय में सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव ने भी अपने जीवन में निरन्तर प्रगति और उन्नति प्राप्त की है। निरन्तर जनसंख्या वृद्धि जैसी अनेक समस्याओं के साथ वरिष्ठजनों की निरन्तर बढ़ती संख्या सम्पूर्ण विश्व के लिए चिन्ता का विषय है। सेवानिवृत्त व्यक्तियों की समस्या के समाधान हेतु अनेक नीतियाँ, योजनाएँ और नियमों-कानूनों का निर्माण किया जा रहा है। वरिष्ठ पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की उम्र 7 वर्ष अधिक मानी गयी है। परन्तु उनकी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता ज्यादा नहीं है अत: परिवार में वे अपनी उपेक्षा का दर्द सह नहीं पाती हैं।

सेवानिवृत्ति पश्चात् नये वातावरण, परिवार एवं समाज में समायोजित होने में स्वयं का आत्मविश्वास ही सबसे बड़ा सहयोगी होता है। नवीनतम रुचियों तथा अनुभवों का उपयोग सेवानिवृत्त व्यक्ति की नियमित दिनचर्या को सुखद बनाने में सहायता प्रदान करता है। वर्तमान आधुनिक तीव्रगामी प्रतिस्पर्धात्मक स्थिति में युवा पीढ़ी अपने भविष्य, जीवन-यापन तथा अन्य चुनौतियों में इतनी अधिक व्यस्त है कि परिवार के वरिष्ठजनों का सेवाभार उठाने हेतु उनके पास समय, साधन और रुचि का अभाव है।

परिवार और समाज में उपेक्षित व्यवहार, नकारात्मक परिवर्तन असामंजस्यता इत्यादि के कारण वरिष्ठजनों के शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उनकी दिनचर्या में आये परिवर्तन और उनकी क्षमताओं, अनुभवों का परिवार और समाज में योगदान जैसे विभिन्न तथ्यों का पता लगाना ही अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है।

उपर्युक्त उद्देश्य को पूर्ण करने हेतु इन्दौर शहर के शासकीय सेवानिवृत्त महिला एवं पुरुषों से साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से जानकारियाँ एकत्रित करने का प्रयास किया गया है।

विषय का चुनाव

सेवानिवृत्ति व्यक्ति अपने खाली समय के सदुपयोग के लिए ऐसी दिनचर्या निर्मित कर सकता है जो अपनी नौकरी के समाय व्यतीत होने वाली दिनचर्या का स्थान ले सके। नौकरी के दिनों में एक व्यस्त दिनचर्या में सुबह उठने, नौकरी पर जाने, थककर शाम को घर लौटने तक का समय व्यस्त रहता था। सेवानिवृत्ति के पश्चात् वह अपनी दिनचर्या अपने आराम, रुचि के कार्य तथा रचनात्मक क्रियाकलापों से अपने जीवन के शेष समय को आनन्दमयी बना सकते हैं।

व्यक्ति सेवानिवृत्ति के पश्चात् एक नये अध्याय की शुरूआत करता है। सेवानिवृत्ति के बाद व्यक्ति का गतिशील जीवन खाली सा प्रतीत होता है और जीवन चक्र एक नया मोड़ लेता है। मनुष्य सेवानिवृत्ति पश्चात स्वयं को कमजोर समझकर जीवन को कष्टमय बना लेते हैं। वर्तमान समय में अनेक परिवर्तनकारी शक्तियों ने संयुक्त परिवार प्रणाली के स्वरूप में परिवर्तन कर संयुक्त परिवारों को एकाकी परिवारों में बदल दिया जिससे वरिष्ठ व्यक्ति स्वयं को असुरक्षित महसूस करने लगे हैं। समाज के परिवर्तनशील मूल्यों ने ही हमारी परम्परा को नष्ट कर दिया है और आज इस आधुनिकतावादी संस्कृति ने वरिष्ठ व्यक्तियों को विभिन्न समस्याओं ने घेर लिया है (गर्ग, 2010)।

अध्ययन का उद्देश्य

सेवानिवृत्ति के पश्चात् व्यक्ति - चाहे वह स्त्री हो या पुरुष - शारीरिक एवं मानसिक रूप से अस्वस्थ समझ लिया जाता है। कहीं-कहीं उच्च पदों पर सेवानिवृत्ति के पश्चात् ही नियुक्ति दी जाती है। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य सेवानिवृत्त व्यक्तियों तथा वर्तमान पीढ़ी के

व्यक्तियों के मध्य परिवार एवं समाज के साथ सामंजस्यता, बदलती परिस्थितियाँ, दिनचर्या, स्वास्थ्य, देश के विकास में उनका योगदान आदि उद्देश्यों को लेकर यह शोध कार्य करने का प्रयास किया गया है। इस शोध कार्य के निम्न उद्देश्य हैं -

1. सेवानिवृत्ति के पश्चात् सेवानिवृत्त व्यक्तियों का परिवार एवं समाज के सदस्यों के मध्य सामंजस्यता में कठिनाई का अनुभव होता है, साथ ही दो पीढ़ियों की विचाराधारा, प्राचीन समय की परिस्थितियों में तुलनात्मक अन्तर, वर्तमान पीढ़ी विशेषकर बच्चों द्वारा सलाह न लिया जाना, स्वयं निर्णय से कार्य करना इत्यादि ऐसे कारण हैं जिससे बुजुर्ग स्वयं को उपेक्षित महसूस करते हैं। यहीं समस्त बातें तनाव उत्पन्न करती हैं।
2. सेवानिवृत्त व्यक्ति स्वयं के परिवार, समाज तथा सरकार से बहुत सी अपेक्षाएँ रखते हैं। सरकार की ओर से उनके लिए अनेक कल्याणकारी योजनाएँ समय-समय पर तैयार की जाती हैं जिनका लाभ कुछ सेवानिवृत्त व्यक्ति लेते हैं और कुछ नहीं ले पाते हैं।
3. सेवानिवृत्त उत्तरदाताओं की दिनचर्या सम्बन्धी जानकारियाँ प्राप्त करना। सेवानिवृत्ति पश्चात् वरिष्ठजनों के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य पर किस तरह का प्रभाव पड़ता है।
4. सेवानिवृत्ति पश्चात् पारिवारिक और सामाजिक स्थिति तथा उनके सामंजस्य इत्यादि के बारे में जानना।
5. समाज के विकास तथा कल्याण में सेवानिवृत्त व्यक्तियों का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण हो सकता है? सेवानिवृत्त होने के एक दिवस पूर्व तक वह व्यक्ति सरकार के लिए बहुत उपयोगी होते हैं किन्तु सेवानिवृत्ति के एक दिन बाद भी वह व्यक्ति सरकार के कार्यों में लगातार अपनी सेवाएँ नहीं दे सकते हैं। यदि सरकार द्वारा उनकी कार्य अवधि कुछ निश्चित समय से लिए बढ़ा दी जाती है तो उस स्थिति में वे सरकार को अपनी सेवाएँ पुन: दे सकते हैं। उन्हें कार्य करते-करते इतना अनुभव हो जाता है कि उनके बड़े अफसर भी संकट के समय उनसे सलाह लेते हैं।

अध्ययन का महत्व

भारत का सामाजिक और आर्थिक परिदृश्य तेजी से बदल रहा है। ऐसे में जीवन की परिस्थितियों में नाटकीय बदलाव आ रहे हैं। इन बदलावों से तालमेल न बैठा पाने के कारण उम्रदराज लोगों में अकेलेपन की भावना बढ़ रही है। इससे शहरी बुजुर्ग ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं। बड़े शहरों के हालात इस मामले में ज्यादा चिन्ताजनक हैं। समय के साथ संयुक्त परिवारों के बिखराव तथा एकल परिवारों के उदय ने बुजुर्गों में एक प्रकार की रिक्तता पैदा करना शुरू कर दी है। बुजुर्गों में यह समस्या केवल उनके लालन-पालन की या उनके लिए गुजारा भत्ता सुनिश्चित करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि उनके स्वास्थ्य एवं मनोरंजन के लिए संस्थागत

उपाय करने के अलावा उनकी भावनात्मक जरूरतों को पूरा करने और उससे भी बढ़कर बुढ़ापे में भी उन्हें सक्रिय बनाये रखने और उनके जीवन को अर्थपूर्ण बनाये रखने की है।

पिछली एक सदी में मानव सम्बन्धों के स्वरूपों में तीव्र गति से परिवर्तन हुए हैं। वर्तमान में पारिवारिक सम्बन्धों में अपनेपन की भावना का एहसास नहीं होता है। जिनके लिए आपने सब कुछ किया था उन्हीं ने आप को 'ये तो आपका कत्तर्व्य था' इन शब्दों तक सीमित करके रख दिया है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि परिवेश और परिस्थितियों के दबाव से परम्परागत जीवनमूल्य केन्द्र से हट रहे हैं और उनके समानान्तर नये जीवनमूल्य विकसित हो रहे हैं (तोमर, 1973)। वरिष्ठजनों की बढ़ती जनसंख्या पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार 1950 में विश्व में वरिष्ठजनों की संख्या 20 करोड़ थी। वह 50 वर्षो में 2000 तक एक अरब तक पहुँच गई थी। यही तादाद से बढ़ती जनसंख्या का आँकड़ा 10 करोड़ और 2030 तक यह 19 करोड़ 80 लाख तक पहुँच जाने की सम्भावना है। भारत में वरिष्ठजनों की बढ़ती जनसंख्या सन् 2000 में 7 करोड़ 70 लाख थी। वह 2020 में 14 करोड़ 10 लाख तक होने की सम्भावना है। हेल्पेज इण्डिया के सर्वे के अनुसार सन् 2004 में 60 वर्ष से अधिक उम्र के वरिष्ठजनों की संख्या 17 करोड़ के करीब थी तथा 1960 से 2060 याने 100 वर्ष की अवधि में यह संख्या लगभग 13 गुना हो जायेगी।

भारत में भी वरिष्ठावस्था तक पहुँचने वालो की बढ़ती संख्या उपर्युक्त विषय में अध्ययन की आवश्यकता बताती है। शासकीय सेवानिवृत्त पुरुष तथा महिला स्वयं को परिवार तथा समाज में एकाकी एवं उपेक्षित महसूस करते हैं। अपने कार्यानुभव से अर्जित ज्ञान का उपयोग बचे समय में किस प्रकार करते हैं। वे सेवानिवृत्ति पश्चात् समय व्यतीत करने के लिए पुन: कार्य एवं अपने रुचि के कार्यो को करके प्रसन्न रहते हुए स्वयं को व्यस्त रखने का प्रयत्न करते हैं। सेवानिवृत्त व्यक्ति परिवार तथा समाज को अपनी सेवाएँ किस प्रकार देते हैं? वे युवाओं को नयी दिशाएँ देकर सृजनात्मकता की ओर ले जाने में मदद करते हैं। परिवार एवं समाज में व्याप्त आर्थिक, सामाजिक विषमताओं को दूर करने में ये अर्जित कार्यानुभवों से किस-किस प्रकार से अपना योगदान देते हैं? समाज तथा सरकार सेवानिवृत्त व्यक्तियों की समस्याओं के प्रति कितनी जागरूक है? बढ़ती जनसंख्या के बारे में, आने वाली समस्याओं के विषय में क्या-क्या योजनाएँ अपनी राष्ट्रीय नीति में तैयार कर रहा है? परिवार तथा समाज उनके साथ सामंजस्य स्थापित कर उनके अर्जित कार्यानुभवों का किस प्रकार लाभ प्राप्त कर रहे हैं? अध्ययन के माध्यम से इन सभी प्रश्नों के उत्तरों को जानने का प्रयास किया गया है।

इन्दौर शहर और सेवानिवृत्त व्यक्ति

सदियों तक परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े रहने के पश्चात् भारत को अपनी स्वतन्त्रता का एहसास था। स्वतन्त्रता के पश्चात् हमारे देश की सर्वप्रथम आवश्यकता थी - देश का विकास एवं नागरिको का कल्याण। अत: भारतीय संविधान निर्माताओं ने संविधान का निर्माण करते समय नागरिकों के कल्याण तथा स्वतन्त्रता अधिकारों की सुरक्षा के साथ

देश के विकास और उन्नति एवं प्रगति के लिए बहुत से कल्याणकारी कार्यों को संविधान के अन्तर्गत समावेशित किया। औद्योगिकीकरण के साथ सम्पन्नता आ जाती है जो हर आयु वर्ग के व्यक्तियों की सोच तथा विचारों में परिवर्तन उत्पन्न करती है और जीवन स्तर के नवीनतम् आयामों को जोड़ते हुए विभिन्न मार्गों को भी प्रशस्त करती है।

इन्दौर शहर के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक इत्यादि स्वरूपों में वर्तमान वैश्वीकरण के कारण रहे हैं जिसका प्रभाव बालक, युवा, महिला, पुरुष तथा वयोवृद्ध वरिष्ठ वर्ग के व्यक्तियों पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। वर्तमान में संयुक्त परिवार की अवधारणा विघटित होती जा रही है जिसके फलस्वरूप एकाकी परिवारों में वृद्धि हो रही है। परिणामस्वरूप परिवार के सेवानिवृत्त वरिष्ठ नागरिकों की परिवार एवं समाज में सामंजस्यता की निरन्तर कमी होती जा रही है जिससे वरिष्ठ नागरिक उपेक्षित, निम्न एवं एकाकी जीवन व्यतीत करने के लिए अनपेक्षित रूप से बाध्य हैं। उपर्युक्त बातों का परिवार तथा समाज के साथ बच्चों पर भी नकारात्मक एवं प्रतिकूल प्रभाव दिखाई देता है। वरिष्ठजनों की सेवानिवृत्ति पश्चात् उनके जीवन के अनुभवों का सहयोग परिवार एवं समाज की उन्नति में लिया जाये तो हो सकता है कि सभ्यता एवं संस्कृति के आयामों को बनाये रखा जो सके।

अध्ययन पद्धति

उपर्युक्त शोध अध्ययन में लाटरी विधि के अनुसार शोध कार्य किया गया है। इसमें सर्वप्रथम सम्भागीय कार्यालय कोष लेखा एवं पेंशन म.प्र. शासन (महाराजा कॉम्प्लेक्स इन्दौर) से पूरे इन्दौर के पेंशन प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की संख्या, उनके नाम और पते प्राप्त किये गये। उनको व्यवस्थित कर दैवनिदर्शन प्रणाली की लाटरी विधि से 400 सेवानिवृत्त उत्तरदाताओं का चयन किया गया जिसमें 200 सेवानिवृत्त पुरुष उत्तरदाता तथा 200 सेवानिवृत्त महिला उत्तरदाताओं का शोध अध्ययन के लिए चयन किया गया।

अध्ययन की उपकल्पना

सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में उपकल्पना का अत्यन्त महत्व है। उपकल्पना का निर्माण तथा उसके प्रयोग की उपादेयता वैज्ञानिक पद्धति का एक महत्वपूर्ण चरण है। उपकल्पना शोध अध्ययन को सही रूप से निर्देशित करती है। प्रस्तुत शोध अध्ययन की उपकल्पनाएँ निम्नानुसार हैं -

1. सेवानिवृत्ति के पश्चात् व्यक्ति की पारिवारिक तथा सामाजिक स्थिति में नकारात्मक परिवर्तन आता है।
2. सेवानिवृत्ति के पश्चात् पुरुष, महिलाओं की तुलना में अधिक एकाकी तथा उपेक्षित महसूस करते हैं।
3. सेवानिवृत्ति के पश्चात् व्यक्तियों के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

4. सेवानिवृत्ति के पश्चात् अधिक समय मिलने पर वे अपनी रुचि के कार्यो एवं सामाजिक गतिविधियों में अपना समय व्यतीत करते हैं।

5. सेवानिवृत्ति के पश्चात् परिवार एवं समाज में सामंजस्य स्थापित करने में महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों को अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

विश्लेषणात्मक अध्ययन

तथ्यों को संगृहीत और एकीकृत करने के बाद वर्गीकृत किया गया है। समान और असमान तथ्यों को अलग-अलग किया गया है और उनको कुछ वर्गों तथा उपवर्गों में अथवा एक क्रम में व्यवस्थित किये जाने के पश्चात् आवश्यक तालिकाओं का विश्लेषण किया गया है।

तालिका 1

उत्तरदाताओं में सेवानिवृत्ति के पश्चात् याददाश्त की स्थिति

क्रमांक	याददाश्त में कमीं	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	हाँ	112 (56)	124 (62)
2.	नहीं	88 (44)	76 (38)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि 56 प्रतिशत पुरुष तथा 62 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं कीयाददाश्त में कमीं हुई है। मानसिक एवं शारीरिक रूप से गिरावट आने की वजह से, सेवाकाल से सहन करते-करते सेवानिवृत्ति तक पहुँचने पर वह मानसिक रूप से ऐसा महसूस करने लगते हैं कि वे अब वृद्ध हो गये हैं। 44 प्रतिशत पुरुष तथा 38 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की याददाश्त में कमीं नहीं आयी है। वे मानते हैं कि पहले अनेक कार्यों और जिम्मेदारियों के चलते सभी बातों को याद रख पाना मुश्किल होता था जबकि सेवानिवृत्ति के पश्चात् कार्यालयीन तनाव न होने के कारण सभी कुछ याद रखने में आसानी रहती है। इनमें महिला उत्तरदाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है।

तालिका 2

उत्तरदाताओं की पारिवारिक स्थिति में परिवर्तन

क्रमांक	परिवर्तन	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	सकारात्मक	62 (31)	84 (42)
2.	नकारात्मक	91 (45.5)	44 (22)
3.	पूर्ववत्	47 (23.5)	72 (36)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 2 से स्पष्ट होता है कि 31 प्रतिशत पुरुष और 42 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की पारिवारिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आया है। वे मानते हैं कि परिवार के सभी सदस्य वर्तमान मे भी उन पर ध्यान देते हैं। क्रियाशीलता और समझदारी से तीनों पीढ़ियाँ एक दूसरे के प्रति भावनात्मक तथा सहयोगात्मक व्यवहार करके कार्यों को सम्पन्न कर लेते हैं। उत्तरदाता स्वयं को परिवार के अन्य सदस्यों के साथ पूर्ण रूप से समायोजन स्थापित कर कार्यों को करने का प्रयास करते हैं। इनमें पुरुष उत्तरदाताओं की तुलना में महिला उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 45.5 प्रतिशत पुरुष और 22 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की स्थिति में नकारात्मक परिवर्तन हुआ है। उनका मत है कि सभी का ध्यान रखते, रिश्ते निभाते, बच्चो को बड़ा करते हुए जिन्दगी बीत गयी। अब आराम का समय आया है तो भी किसी न किसी प्रकार का काम करना ही पड़ता है। महिला उत्तरदाता कहती हैं कि पहले अपने बच्चों को बड़ा किया, अब बच्चों के बच्चों को सम्भालो। कई स्थानों पर बहुएँ कामकाजी हैं, ऐसी परिस्थितियों मे महिला उत्तरदाताओं को घर की कई जिम्मेदारियाँ देखना होती हैं। वहीं दूसरी ओर पुरुषों से बिजली बिल, टेलिफोन बिल तथा अन्य घरेलु कार्यों में मदद की अपेक्षा की जाती है जिससे वे अपनी स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन नहीं पाते हैं। वे सहजता से कार्य न करके तनाव की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन नहीं पाते हैं। वे सहजता से कार्य न करके तनाव की स्थितियों में काम करते हैं। परिवार के सदस्यों द्वारा भी उनकी मन:स्थिति को न समझते हुए और उन पर ध्यान न देने से भी इस प्रकार की स्थितियाँ निर्मित होती हैं। इसमें पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की तुलना में अधिक है। 23.5 प्रतिशत पुरुष तथा 36 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की स्थिति में कोई परिवर्तन महसूस करना नहीं पाया गया। उनका कहना है कि जैसा पहले चलता था वैसा ही अब भी चल रहा है। इसमें महिला उत्तरदाता का प्रतिशत पुरुष उत्तरदाताओं की तुलना में अधिक है।

तालिका 3

सेवानिवृत्ति पश्चात् पारिवारिक सामंजस्य की स्थिति

क्रमांक	सामंजस्यता	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	हाँ	89 (44.5)	64 (32)
2.	नहीं	111 (55.5)	126 (63)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 3 से स्पष्ट होता है कि 44.5 प्रतिशत पुरुष तथा 32 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं का यह मत है कि पारिवारिक सामंजस्यता में कमीं आयी है। परिवार में छोटी-छोटी बातों से निर्मित होने वाले तनाव इसकी मुख्य वजह हैं। वर्तमान में वरिष्ठजनों का दबाव अपने बच्चों पर नहीं रह गया है। परिवार में सेवानिवृत्ति पश्चात् घर के सदस्य सामंजस्यता बनाये रखने में उनकी मदद नहीं करते हैं। उन्हें स्वयं ही स्वभाव में परिवर्तन करना होता है। पाश्चात्य सभ्यता एवं आधुनिकता की अन्धी दौड़ ने हमारी संस्कृति को प्रभावित

किया है। जिसके परिणामस्वरूप हम अनेक समस्याओं से ग्रसित हैं। इनमें महिला उत्तरदाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 55.5 प्रतिशत पुरुष तथा 63 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं का मत यह है कि पारिवारिक सामंजस्य में किसी भी प्रकार की कमीं नहीं आयी है। इनमें पुरुष उत्तरदाताओं की तुलना में महिला उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है।

तालिका 4
उत्तरदाताओं की पारिवारिक निर्णयों में भागीदारी

क्रमांक	पारिवारिक निर्णयों में भागीदारी	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	हाँ	101 (50.5)	119 (59.5)
2.	नहीं	99 (49.5)	81 (40.5)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 4 से स्पष्ट होता है कि 50.5 प्रतिशत पुरुष तथा 59.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं से पारिवारिक निर्णयों में सलाह ली जाती है तथा छोटे या बड़े फैसलों में उनकी सलाह महत्वपूर्ण मानी जाती है। पुरुष उत्तरदाताओं की तुलना में महिला उत्तरदाताओं से पारिवारिक निर्णयों में सलाह नहीं ली जाती है। उनसे सलाह न लेने का कारण उनकी पुरानी रूढ़िवादी सोच को माना जाता है। वे वर्तमान समस्याओं एवं किसी भी प्रकार के विचार विमर्शों की तुलना अपने समय से कर निर्णय दे देती हैं जो बच्चों तथा पारिवारिक सदस्यों को ठीक नहीं लगती हैं।

तालिका 5
उत्तरदाताओं के पारिवारिक उत्तरदायित्व

क्रमांक	पारिवारिक उत्तरदायित्व	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	हाँ	149 (74.5)	120 (60)
2.	नहीं	51 (25.5)	80 (40)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 5 से स्पष्ट होता है कि 74.5 प्रतिशत पुरुष तथा 60 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं पर वर्तमान में भी पारिवारिक उत्तरदायित्व हैं। उन्हें सेवानिवृत्ति के पश्चात् भी अपने उत्तरदायित्वों से मुक्ति नहीं मिली है। 25.5 प्रतिशत पुरुष तथा 40 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं पर किसी भी प्रकार का पारिवारिक उत्तरदायित्व नहीं है।

तालिका 6
उत्तरदाताओं के उत्तरदायित्वों के प्रकार

क्रमांक	उत्तरदायित्वों के प्रकार	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	बच्चों की शिक्षा	42 (21)	24 (12)
2.	विवाह	28 (14)	40 (20)
3.	रोजगार	29 (14.5)	26 (13)
4.	अन्य	50 (25)	30 (15)
5.	कोई उत्तरदायित्व नहीं	51 (25.5)	80 (40)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 6 से स्पष्ट होता है कि 42 प्रतिशत पुरुष तथा 12 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को स्वयं के बच्चों की शिक्षा एवं कुछ उत्तरदाताओं को बच्चों के बच्चों की शिक्षा का उत्तरदायित्व है। इनमें महिला उत्तरदाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 14 प्रतिशत पुरुष तथा 20 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को बच्चों के विवाह की चिन्ता है। बेटा तथा बेटी की योग्यता के अनुरूप योग्य जीवनसाथी की तलाश भी चिन्ता का कारण है। 14.5 प्रतिशत पुरुष तथा 13 प्रतिशत महिला उत्तरदाता बच्चो के उचित व्यवसाय एवं नौकरी-रोजगार के लिए चिन्तित हैं क्योंकि उचित रोजगार होने से उनके बच्चे व्यवस्थित ढंग से अपनी जीवीकोपार्जन कर सकेंगे। 25 प्रतिशत पुरुष तथा 15 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को परिवार में किसी बीमार सदस्य, विकलांग सदस्य की देखभाल से सम्बन्धित उत्तरदायित्व भी है। 25.5 प्रतिशत पुरुष तथा 40 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को किसी प्रकार का उत्तरदायित्व नहीं है।

तालिका 7
उत्तरदाताओं में अकेलापन महसूस करना

क्रमांक	अकेलापन	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	हाँ	118 (59)	44 (22)
2.	नहीं	47 (23.5)	86 (43)
3.	कभी-कभी	35 (17.5)	70 (35)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 7 से स्पष्ट होता है कि 59 प्रतिशत पुरुष तथा 22 प्रतिशत महिला उत्तरदाता स्वयं को एकाकी महसूस करते हैं। इनमें महिला उत्तरदाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 23.5 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाताओं को समय व्यतीत करने में अधिक परेशानी होती है लेकिन वे स्वयं को रुचिकर कार्यों में व्यस्त रखने का प्रयत्न करते हैं। उन्होनें सेवानिवृत्ति के पूर्व से ही योजना बना ली थी कि आगे के खाली समय को कैसे व्यतीत करना है। उनका मत यह है कि इस अवस्था में स्वयं को किसी रुचिकर कार्य में व्यस्त

रखना अपने शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ को बनाये रखने के लिए सबसे श्रेष्ठ उपाय है। 43 प्रतिशत महिला उत्तरदाता स्वयं को गृहकार्यो में व्यस्त कर लेती हैं जिससे उनके खाली समय का उपयोग हो जाता है और व्यस्तता भी बनी रहती है। 17.5 प्रतिशत पुरुष तथा 35 प्रतिशत महिला उत्तरदाता कभी-कभी अकेलेपन का अनुभव करते हैं। उन्हें पुराने दोस्तों के छूट जाने, परिवार के सदस्यों के साथ तालमेल न होने तथा वैचारिक मतभेदों के कारण ऐसा अनुभव होता है। वे सभी साधन उपलब्ध होने पर भी स्वयं को उपेक्षित सा महसूस करते हैं। उन्हें उम्र के इस पड़ाव में स्वयं को परिवार से अलग महसूस करने, दुर्भाग्यवश जीवनसाथी में किसी एक का दूसरे से साथ छूटने पर भी एकाकीपन लगता है और किसी नये स्थान में जाकर रहने से भी अकेलापन लगता है।

तालिका 8
उत्तरदाताओं की रुचियाँ

क्रमांक	रुचियाँ	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	टी.वी.देखना	18 (9)	105 (52.5)
2.	पढ़ना	34 (17)	29 (14.5)
3.	संगीत सुनना	40 (20)	19 (9.5)
4.	बगवानी	52 (26)	26 (13)
5.	उपर्युक्त सभी	56 (28)	21 (10.5)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 8 से स्पष्ट होता है कि 9 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाता टेलिविजन कार्यक्रमों को देखना पसन्द करते हैं। वे समाचार एवं अपने रुचिकर कार्यक्रम देखते हैं। 52.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाता टेलिविजन में नाटक, समाचार तथा फिल्में देखना पसन्द करती हैं। केबल होने और अधिक चैनल्स होने से वे अपनी रुचि के अनुसार उनका चयन कर देखती हैं। 17 प्रतिशत पुरुष तथा 14.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की रुचि पढ़ने में है। 20 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाता संगीत सुनते हैं क्योंकि उन्हें आँखों की कमजोरी तथा जल्दी थकान आने की वजह से पढ़ने तथा टेलिविजन देखने में परेशानी होती है। 9.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अपने गृहकार्यों को करते समय संगीत सुनती हैं जिसमें रेडियो सुनना प्रमुख है। वे आकाशवाणी, माय एफ.एम. एवं रेडियो मिर्ची तथा रेड़ एफ.एम. सुनना पसन्द करती हैं जिससे मन की प्रसन्नता के साथ-साथ काम भी पूर्ण हो जाता है। 26 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाता अपना समय बागवानी करने में व्यतीत करते हैं। उन्होनें घर के बाहर, छत पर छोटे से बगीचे का निर्माण कर रखा है जिसमें वे पौधो को नियमित पानी देते हैं। पौधो की देख-रेख करने से उन्हें अधिक प्रसन्नता का अनुभव होता है। 13 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं ने भी अपने छत पर गमलों में अलग-अलग फूलो के पौधो को लगा रखा है जिसके फलस्वरूप प्रतिदिन भगवान् को अर्पण करने के लिए उन्हें अपने बगीचे से ही फूल मिल जाते हैं। पौधो की देखभाल करना उन्हें बहुत

अच्छा लगता है। उनका मानना यह भी है कि पेड़-पौधे हमारे बहुत अच्छे दोस्त होते हैं। व्यक्ति जितना प्रकृति के निकट होता है उसे उतनी मानसिक शान्ति मिलती है तथा तनाव को कम करने में भी सहायता मिलती है। 28 प्रतिशत पुरुष तथा 10.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाता तीनों कार्यों में अपनी रुचि रखते हैं। उनका मत है कि मनोरंजन और आत्मसन्तुष्टि के साथ-साथ आनन्दपूर्वक समय व्यतीत कर व्यस्त रहने के लिए इन सभी बातों का अपना महत्व है। वे इन सभी कार्यों को करके आत्मसन्तुष्टि को महसूस तो करते हैं लेकिन वे अपनी रुचियों को नियमित समय नहीं दे पाते हैं।

तालिका 9

उत्तरदाताओं के पुन: कार्य करने के कारण

क्रमांक	कारण	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	स्वस्थ्य रहने के लिए	31 (15.5)	10 (5)
2.	पारिवारिक आवश्यकता	24 (12)	2 (1)
3.	आत्मसन्तुष्टि	6 (3)	5 (2.5)
4.	समय व्यतीत करने	28 (14)	13 (6.5)
5.	पुन: कार्य नहीं करते	111 (55.5)	170 (85)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 9से स्पष्ट होता है कि 15.5 प्रतिशत पुरुष तथा 5 प्रतिशत महिला उत्तरदाता शारीरिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए कार्य करते हैं। इनमें महिला उत्तरदाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 12 प्रतिशत पुरुष तथा 1 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अपनी पारिवारिक आवश्यकता हेतु कार्य करते हैं। इनमें महिला उत्तरादाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है। 3 प्रतिशत पुरुष तथा 2.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अपनी आत्मसन्तुष्टि के लिए कार्य करते हैं। उनका मत है कि इतने समय तक कार्य किया है, अब शेष जिन्दगी भी कार्य करते हुए व्यतीत हो जाये तो अच्छा है। 14 प्रतिशत पुरुष तथा 6.5 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अपने खाली समय को व्यतीत करने के लिए पुन: कार्य करते हैं। इनमें महिला उत्तरदाताओं की तुलना में पुरुष उत्तरदाताओं का प्रतिशत अधिक है । 55.5 प्रतिशत पुरुष तथा 85 प्रतिशत महिला उत्तरदाता पुन: कार्य नहीं करते हैं। कुछ उत्तरदाता कार्य करना चाहते हैं जबकि कुछ उत्तरदाताओं का मत है कि अब उन्हें पुन: कार्य करने की आवश्यकता नही है, जितनी पेंशन मिल रही है वह उनके खर्चों के लिए पर्याप्त है। वे अब काम करने की इच्छा भी नहीं रखते हैं।

तालिका 10
उत्तरदाताओं में सामाजिकता का निर्वाह

क्रमांक	निर्वाह	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	हाँ	99 (49.5)	140 (70)
2.	नहीं	101 (50.5)	60 (30)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 10 से स्पष्ट होता है कि 50.5 प्रतिशत पुरुष तथा 30 प्रतिशत महिला उत्तरदाता सामाजिक सम्बन्धों एवं नातेदारी में स्वास्थ्य ठीक न रहने तथा पुराने कटु अनुभवों के चलते स्वयं को असमर्थ पाते हैं। विशेष परिस्थितियों में कभी-कभी जाना पड़ता है। 49.5 प्रतिशत पुरुष तथा 70 प्रतिशत महिला उत्तरदाता सेवानिवृत्ति के पश्चात् समय रहने से उन सभी जगहों पर जहाँ वे जाना चाहें, जा सकते हैं। वे बच्चों की छुट्टियों में तीर्थस्थानों पर जाना भी पसन्द करते हैं और यथासम्भव सभी सामाजिक तथा पारिवारिक समारोहो में शामिल होते हैं। सेवारत रहते हुए कई बार महत्वपूर्ण अवसरों पर भी छुट्टी न मिल पाने के कारण शामिल नहीं हो पाते थे अत: सेवानिवृत्ति पश्चात् पर्याप्त समय होने से वे जहाँ भी जाना चाहे वहाँ जा सकते हैं।

तालिका 11
उत्तरदाताओं की सामाजिक कार्यों में भागीदारी के प्रकार

क्रमांक	कार्य के प्रकार	पुरुष (प्रतिशत)	महिला (प्रतिशत)
1.	अनाथ बच्चो के लिए	12 (6)	8 (4)
2.	धार्मिक कार्यों में	14 (7)	12 (6)
3.	सामाजिक कार्य	3 (1.5)	4 (2)
4.	भागीदारी नहीं करते	171 (85.5)	176 (88)
	योग	200 (100)	200 (100)

तालिका 11 से स्पष्ट होता है कि 6 प्रतिशत पुरुष तथा 4 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अनाथ बच्चों के लिए जो भी यथासम्भव मदद हो उसको करने का प्रयास करते हैं। वे सोचते हैं कि कभी अपने परिवार, समाज और रिश्तेदारो से बाहर ही नहीं निकल पाते हैं अत: इन बच्चों के लिए भी कुछ किया जाना चाहिए। 7 प्रतिशत पुरुष तथा 6 प्रतिशत महिला उत्तरदाता धार्मिक कार्यों में अपना सहयोग एवं योगदान देते हैं। 1.5 प्रतिशत पुरुष तथा 2 प्रतिशत महिला उत्तरदाता द्वारा सामाजिक कार्य के रूप में कन्यादान में बर्तन तथा सहयोग राशि दी गई है। 85.5 प्रतिशत पुरुष तथा 88 प्रतिशत महिला उत्तरदाता किसी भी प्रकार के सामाजिक कार्यों में सहयोग नहीं कर पाते हैं। इसके लिए वे अपना स्वास्थ्य तथा पारिवारिक एवं अन्य परिस्थितियों को उनके अनुरूप न होना मानते हैं।

विश्लेषणात्मक अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष

कहते हैं बच्चों और बुजुर्गों में कोई फर्क नहीं होता है। बचपन उम्र का पहला पड़ाव होता है और वृद्धावस्था उम्र का आखिरी पड़ाव। समय में आये बदलावों के कारण बुजुर्गों की जीवनशैली में उतार-चढ़ाव आना स्वभाविक है। देश में तेजी से बदलती आर्थिक-सामाजिक परिस्थितियाँ इसके लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार हैं। आज यह देख-सुन कर मन करुणा से भर जाता है कि इस यथार्थवादी और तेज रफ्तार युग में बुजुर्गों के प्रति न केवल लापरवाही बरती जा रही है बल्कि उनको नजर अन्दाज करने योग्य भी समझा जा रहा है। यह सोचने की कोशिश ही नहीं की जाती कि जिन्होंने हमें जन्म दिया और जिन्होंने हमारी परवरिश की है उनकी देखभाल कौन करेगा? लालची और स्वार्थी होकर बच्चे उनकी जमीन-जायदाद को जल्द से जल्द हड़पना चाहते हैं, मगर उन्हें सँभालेगा कौन, इस बारे में बिल्कुल भी नहीं सोचते। वे बुजुर्गों के पास बैठने और सुख-दुःख पूछने के लिए समय भी नहीं निकालते हैं। बहुत लाड़-प्यार और मुश्किलों से पाले गये बच्चे ही उनसे बेगानों जैसा व्यवहार करते हैं। कुछ लोग पीछा छुड़ाने के लिए उनको वृद्ध आश्रम में छोड़ देते हैं या दर-दर भटकने के लिए मजबूर कर देते हैं। शायद वे यह भूल जाते हैं कि एक दिन वे स्वयं भी बूढ़े होंगे और उनके साथ भी उनके बच्चे ऐसा ही व्यवहार कर सकते हैं। यह समझ लेना जरूरी है कि जिन लोगों द्वारा बुजुर्गों का निरादर किया जाता है वे सभ्यता और मान-मर्यादा से तो वंचित होते ही हैं उन्हें अपनों में भी सुख-शान्ति प्राप्त नहीं होती है।

सन्दर्भ

1. गर्ग, राजेन्द्र, *सुखमय, वृद्धावस्था,* रचना प्रकाशन, जयपुर, 2010
2. तोमर, बिहारी सिंह, *पारिवारिक समाजशास्त्र,* श्रीराम मेहरा एंड कंपनी, आगरा, 1973
3. मदन, जी.आर, *भारतीय सामाजिक समस्याएँ,* विवेक प्रकाशन, 7-यू.ए. जवाहर नगर, नई दिल्ली, 1990

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 34-49)

आपदा और विकास के सन्दर्भ में उत्तर प्रदेश के बहराईच जिले में आजीविका का अध्ययन

केयूर पाठक* एवं बिधु भरद्वाज†

प्रस्तुत शोध-प्रपत्र बहराइच, उत्तरप्रदेश में वर्ष 2015 में किये गये एक मानवशास्त्रीय अध्ययन का प्रतिफल है। प्राथमिक तथ्य संकलन के लिए सहभागी अवलोकन के साथ-साथ साक्षात्कार का सहारा लिया गया और द्वितीयक तथ्य संकलन के लिए विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों, अभिलेखों आदि की सहायता ली गयी है।

पारम्परिक तरीके से जब भी सोचा जाता है तो जीविकोपार्जन को मात्र एक आर्थिक क्रिया के रूप में ही विश्लेषित किया जाता है, यद्यपि यह एक व्यापक अवधारणा है जो मानवीय जीवन के एक बड़े हिस्सा को समाविष्ट करती है। इसके अध्ययन की व्यापकता समाज विज्ञान, विशेषकर विकासात्मक समाजशास्त्र, मानवशास्त्र एवं मानवविज्ञान में इसे केन्द्रीय महत्व प्रदान करता है। वर्तमान में तीसरी और चौथी दुनिया में जो सामाजिक और राजनीतिक असन्तोष की स्थिति उत्पन्न हुई है इसके लिए आजीविका के मुद्दे को स्थगित करना व्यावहारिक नहीं हो

*पोस्ट-डॉक्टोरल फेलो, काउंसिल फॉर सोशल डेवलपमेंट, (भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान परिषद्, नई दिल्ली का स्वायत्त शोध संस्थान), हैदराबाद क्षेत्रीय शाखा (तेलंगाना)
E-mail: keyoorpathak4@gmail.com
†कारा अधीक्षक, सिवान कारा, बिहार (यूजीसी-एनईटी/जेआरएफ)

सकता। भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखें तो विगत दशको में जो किसान, आदिवासी और महिला आन्दोलन हुए हैं वे मूलत: उनके जीविकोपार्जन पर आये संकट के परिणामस्वरूप ही प्रस्फुटित हुए हैं और जिसकी जड़ें विकास नीतियों में हैं (शिवा, 1988)। आजीविका पर आये खतरे और असुरक्षा ने औपनिवेशिक भारत में भी कई किसान और आदिवासी आन्दोलनों को जन्म दिया था जिसका दमन तत्कालीन सरकार ने क्रूरतापूर्ण तरीके से किया (चंद्रा, 1989)।

भारत के पर्यावरणीय आन्दोलन और यूरोप के पर्यावरणीय आन्दोलन के स्वरूप और प्रवृति में जो एक मुख्य अन्तर रहा है वो यह कि एक तरफ जहाँ यूरोप में यह वन्यजीवों पर आये संकट के परिणामस्वरूप उपजा, वहीं दूसरी तरफ भारतीय पर्यावरणीय आन्दोलन का केन्द्र-बिदु मानवीय 'सांस्कृतिक-धारणीय' जीवनशैली और उनके आजीविका के प्राकृतिक स्रोतों पर आया संकट था। हिमालय के निकटवर्ती क्षेत्रों के प्राकृतिक संसाधनों पर सरकारी हस्तक्षेप ने वहाँ रहने वाले ग्रामीणों को आतंकित कर दिया और उन्हें अपना सम्पूर्ण अस्तित्व ही असुरक्षित प्रतीत होने लगा। इस तरह की प्रवृतियों ने वहाँ चिपको जैसे आन्दोलन को जन्म दिया जो भारतीय पर्यावरणीय आन्दोलन का प्रस्थान बिन्दु भी था। इतिहासकार और पर्यावरणविद् रामचन्द्र गुहा भी इस अवधारणा पर बल देते हैं कि यह आन्दोलन असल में हाशिये की आबादी - पहाड़ी किसानों, आदिवासियों, मछुआरों, बाँधों से विस्थापितों - के संघर्षों का परिणाम रहा है, जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। इन संघर्षों के उभार का केन्द्रीय कारण आजीवका और अस्तित्व ही रहा है (गुहा, 2013)।

हाल के कुछ दशकों में ग्रामीण भारत में आजीविका की संरचना को क्षति पहुँचाने में आपदाओं की बड़ी भूमिका रही है; लाखों लोग विस्थापित हुए और धीरे-धीरे आसपास के क्षेत्रों और शहरों में गुम हो गये (आय.डी.आर., 2014)। इन आपदाओं ने ग्रामीण समाज की पूरी संरचना को तहस-नहस कर डाला। इस सन्दर्भ में लोककल्याणकारी राज्य की क्या भूमिका रही या क्या होनी चाहिए, यह भी एक विचारणीय बिन्दु है।

आपदा : एक संक्षिप्त मूल्यांकन

आपदा शब्द से एक ऐसी अचानक आनेवाली स्थिति का बोध होता है जिससे मानवीय जगत् को व्यापक क्षति पहुँचती हो। 'आपदा' या 'डिजास्टर' शब्द एस्ट्रोलॉजिकल विज्ञान से व्युत्पन्न शब्द है जो लगभग एक शताब्दी से अधिक समय से अध्ययन का विषय रहा है। शोध की दृष्टि से 1950 के दशक से इसका अधिक विस्तार हुआ। इस कड़ी में 1963 में ओहियो स्टेट विश्वविद्यालय में 'डिजास्टर रिसर्च सेंटर' की स्थापना महत्वपूर्ण पहल थी जिसमें समाजशास्त्री एनरीको कुअरेनतेल्ली, रसेल ड्यन्स, और जे. यूजीने हास का विशेष योगदान रहा (रेड्डी, 2013)। धीरे धीरे निरन्तर आने वाली आपदाओं ने इसके अध्ययन और शोध को और भी प्रेरित किया।

आपदा को परिभाषित करते हुए 'द सेंटर ऑन द एपिडोमोलॉजी ऑफ डिजास्टर' ब्रुसेल्स, बेल्जियम ने लिखा - "आपदा एक अप्रत्याशित और अक्सर अचानक होने वाली

घटना है जो बहुत नुकसान, विनाश और मानव पीड़ा का कारण बनती है। यह एक ऐसी स्थिति या घटना है जो स्थानीय क्षमता को दबा देती है तथा बाहरी सहायता के लिए एक राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनुरोध की आवश्यकता होती है" (रेड्डी, 2013)। दूसरी तरफ सुसान एम. हॉफमैन और अन्थोनी ओलिवर स्मिथ ने आपदा को प्राकृतिक और मानवीय दोनों ही क्रियाओं के सन्दर्भों में स्पष्ट किया - "आपदा को एक ऐसी घटना के रूप में देखा जाता है जिसमें प्राकृतिक तकनीकी से सम्भावित विनाशकारी घटक का संयोजन सम्मिलित होता है, जिससे आबादी सामाजिक रूप से उत्पादित असुरक्षा की स्थिति में आ जाती है" (स्मिथ एवं अन्य, 1999)। प्राकृतिक आपदाओं की श्रेणी में बाढ़, तूफान, भूकम्प आदि आते हैं, वहीं चेर्नोबिल दुर्घटना और भोपाल त्रासदी मानवजन्य आपदाओं के दुःखद उदाहरण हैं। स्पष्ट है कि आपदाओं का स्वरूप प्राकृतिक भी है और मानव जनित भी। लेकिन एक प्रश्न खड़ा हो जाता है कि आपदा के वीभत्सकारी स्वरूप के लिए कौन जिम्मेदार है?

प्राकृतिक आपदाओं ने किस तरह तबाही लाई है और कैसे इसने कई समुदायों को तहस-नहस किया है, इसके लिए पूरी दुनिया में पर्याप्त संख्या में उदाहरण उपलब्ध हैं। वर्ष 2013 की उत्तराखण्ड बाढ़ ने भयानक तबाही मचाई। इसके आने की मुख्य वजह निरन्तर वर्षा, बादल का फटना, तीव्र जल प्रवाह और पर्यावरणीय असन्तुलन था। वर्षा सामान्य से 440 प्रतिशत अधिक थी। सैकड़ों लोग मरे (बिड़वई, 2013)। इसी तरह कोसी बाढ़ 2008 बिहार के ज्ञात इतिहास की सबसे खतरनाक बाढ़ थी। 18 अगस्त, 2008 को इसने सरकारी आँकड़ों के अनुसार 1000 से अधिक लोगों की जान ली और हजारों की संख्या में लोग विस्थापित हुए। बारिश और कमजोर बाँध के टूटने की वजह से यह तबाही हुई। लगभग 23 लाख लोग बुरी तरह से प्रभावित हुए (यू.एन. रिपोर्ट, 2008)। वैश्विक स्तर पर बात करें तो बोलीविया (29 जनवरी, 2014) की बाढ़ से कम से कम 2600 परिवार विस्थापित हुए और 30 से अधिक मौते हुईं। कम्बोडिया (27 सितम्बर, 2013) में करीब 23 मौतों के साथ करीब 56900 परिवार विस्थापित हुए। बुरुंडी में 11 फरवरी, 2014 की बाढ़ से 60 मौतें हुईं और इसके अलावा इसने राजधानी को बुरी तरह से चपेट में लिया था।

आपदा का आजीविका से सीधा सम्बन्ध है। यह जब कभी आती है तो आर्थिक और सामाजिक विध्वंस साथ लाती है। आपदा से उत्पन्न होने वाली स्थितियों में बेरोजगारी, विस्थापन और सामाजिक बिखराव प्रमुख हैं। 1999 की लेक चाड की बाढ़ ने 25000 लोगों को तो केवल नाइजीरियन क्षेत्र से विस्थापित किया था, जबकि इसके निकटवर्ती क्षेत्रों में भी बाढ़ से विस्थापन हुआ था। बड़ी संख्या में भेड़, बकरियाँ और घरेलू सामानों की बर्बादी हुई थी। अधिकांश गाँवों में तो आजीविका के स्रोत 90 प्रतिशत तक प्रभावित हुए थे (इवांस, 2014)। वियतनाम की 2013 की बाढ़ ने 2491 हेक्टेयर चावल की खेती को बर्बाद कर दिया। उत्तराखंड की तबाही तो और भी व्यापक थी। बागवानी के 15536 हेक्टेयर, पशुधन और 42 मछलियों के तालाब, 20401 हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि, 800000 पंजीकृत छोटे उद्योग में से 80 प्रतिशत और बिना पंजीकृत उद्योग में से 83320 परिवार का नुकसान हुआ।

आजीविका : अवधारणात्मक विश्लेषण

आजीविका या जीविकोपार्जन को परिभाषित करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए कि यह मात्र एक अर्थोपार्जन का जरिया नहीं अपितु एक सम्पूर्ण जीवन पद्धति है जो हमारे आसपास की पर्यावरणीय और पारिस्थितिकीय दशाओं पर भी निर्भर होती है। आजीविका की अपनी पारिस्थितिकीय सीमाएँ भी होती हैं और इसकी पुष्टि अलिअसे रेक्लुस और फ्रेडरिक लिप्ले ने भी की है (गुहा, 2013)। आजीविका को परिभाषित करने के लिए चैम्बर्स और कोनवे ने इसे विस्तृत आयाम देने का प्रयास किया और कहा - "आजीविका में क्षमताओं, सम्पत्ति (प्राकृतिक और सामाजिक दोनों) और जीवन यापन के साधनों के लिए आवश्यक गतिविधियाँ शामिल हैं; एक आजीविका टिकाऊ होती है जो प्राकृतिक संसाधनों के आधार को कम न करते हुए, अपनी क्षमताओं और सम्पत्तियों को बनाए और बढ़ाते हुए तनाव और झटकों से उबरने के साथ सामना कर सकती है" (चैम्बर्स और कोनवे, 1992)।

इनकी परिभाषा मुख्यत: तीन मानकों पर आधारित है - सामर्थ्यता, समानता एवं धारणीयता। ये तीनों ही शब्द प्रथम दृष्टया पृथक्-पृथक् प्रतीत होते हैं, लेकिन वास्तव में सब एक दूसरे के पूरक हैं। वे लिखते हैं - "ये एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं तथा सामर्थ्यता, समानता और धारणीयता, विकास की सोच के लिए एक रूपरेखा या प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं जो आदर्श और व्यावहारिक दोनों हैं" (चैम्बर्स और कोनवे, 1992)।

इसके बावजूद इन तीनों की भिन्नता को जानने के लिए यह आवश्यक है कि इनका अलग संक्षिप्त विश्लेषण किया जाए -

सामर्थ्यता

इसका शाब्दिक अर्थ होता है वो मूलभूत चीजें जो व्यक्ति को उसके अपेक्षिक क्रियाओं को करने में सहायक और अनुकूल हों। विकासात्मक अर्थशास्त्र में सर्वप्रथम अमर्त्य सेन ने इसका व्यापक प्रयोग किया (चैम्बर्स और कोनवे, 1992)। सामर्थ्यता एक व्यापक शब्द है जो किसी भी लोकतान्त्रिक समाज के गठन के लिए नागरिकों में अनिवार्य रूप से अपनी माँग करता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार आदि ऐसे मानक हैं जो व्यक्ति की सामर्थ्यता का निर्माण करते हैं।

समानता

समानता को मापने की जो पारम्परिक प्रविधि रही है वह मात्र आय के तुलनात्मक वितरण से सम्बद्ध रही है, जबकि चैम्बर्स ने इसे अधिक विस्तृत आयाम देने का प्रयास किया है जिसमें सम्पत्ति, अवसर और सामर्थ्यता मुख्य तत्व रहे हैं और जिसमें किसी प्रकार के भेदभाव - चाहे वह लिंग, जनसंख्या या किसी अन्य आधार पर हों - का निषेध किया है। इसी

कड़ी में यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि भारतीय संविधान ने भी समानता को इन्हीं सन्दर्भों में प्रस्तुत किया है और इसके अन्तर्गत अनेक उपबन्ध भी दिये गये हैं (बासु, 2011)।

धारणीयता

संसाधनों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए यह अनिवार्य हो जाता है कि मानव इनका सन्तुलित उपभोग इस प्रकार करे कि प्राकृतिक जीवन शृंखला की निरन्तरता न रुके और आनेवाली पीढियाँ भी इन संसाधनों का उपभोग कर सकें, यही धारणीयता है। चैम्बर्स आजीविका के सतत प्रवाह के लिए धारणीयता की अपरिहार्यता पर बल देते हैं (चैम्बर्स और कोनवे, 1992)।

इसी सन्दर्भ में यह जानना आवश्यक है कि विकास के विमर्श की पुरानी परिपाटी की उन्होंने तीव्र आलोचना इसके बाजारू मानदण्ड के कारण की। ये पैमाने थे - उत्पादन, रोजगार और गरीबी आधारित।

इनका प्रतिवाद था कि ये सारे मानक उभरते हुए पूंजीवाद और बाजार के हितों को ध्यान में रखकर बनाये गये हैं जो मानवीय समुन्नति के सम्पूर्ण पक्षों से विमुख हैं (चैम्बर्स और कोनवे, 1992)। आजीविका को परिभाषित करते समय उन्होंने इन्हीं कमियों से बचने का प्रयास किया और अधिक मानवीय और पर्यावरणीय व्याख्या एक सम्पूर्ण धारणीय जीवन पद्धति के रूप में की।

आजीविका एक विकासात्मक मुद्दा रहा है और इसका वृहद् प्रयोग 'पारिस्थितिकीय राजनीति' में हुआ है, जिसमें धारणीयता और मानव अधिकारों को लेकर विमर्श है। जैसा कि पूर्व में उद्धृत है कि प्रारम्भिक दौर में यह अवधारणा केवल रोजगार से जुड़ी थी, लेकिन बदलती राजनीतिक और आर्थिक नीतियों ने इसके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक पक्षों के अन्तर्गत रखकर इसे एक नया आयाम दिया। इस तरह आजीविका को सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्रिया के समुच्चय के रूप में जाना जाता है।

आजीविका : विकासात्मक सन्दर्भ

भारत में आधुनिक विकास की जड़ें ब्रिटिश कालीन इतिहास से प्रारम्भ होती हैं और आजादी के कुछ दशकों तक तो इसका स्वरूप कल्याणकारी रहा लेकिन 1991 की आर्थिक नीतियों के साथ ही यह पुन: अपने औपनिवेशिक स्वरूप में ही चला गया (अली एवं भास्कर, 2011)। पश्चिम ने अपने राजनीतिक अधिकार तो त्याग दिये लेकिन विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष आदि की स्थापना कर इसने अपने अधिकार को नये रूप में जारी रखा (ट्रू जे., 2003)। यूरोपीय और अमेरिकन व्यापारिक हितों को केन्द्र में रखकर इसने इन आर्थिक नियमन करनेवाली संस्थाओ का निर्माण किया जो तीसरी और चौथी दुनिया का परोक्ष शोषण भी करती हैं। अर्थशास्त्री भरत झुनझुनवाला लिखते हैं - "उत्तराखण्ड में विष्णुगाड पीपलकोटी परियोजना में विश्व बैंक के कार्यकलापों का वास्तविक रूप सामने आता है।

विश्व बैंक ने इस परियोजना को ऋण दिया है। वर्तमान में पीपलकोटी में अलकनन्दा नदी स्वच्छन्द बहती है। नीचे से मछलियाँ ऊपर पलायन करती हैं और अण्डे देती हैं। बाँध बनाने के बाद मछलियों का आवागमन अवरुद्ध हो जायेगा और क्षेत्र में रहने वाले गरीबों को मछली नहीं मिलेगी। वर्तमान में अलकनन्दा नदी ऊपर से बालू लेकर आती है। लोग मकान बनाने के लिए बालू को सीधे नदी से उठा लेते हैं। परियोजना बनने के बाद बालू बाँध के पीछे कैद हो जायेगी। बाँध के पीछे पानी के ठहरने से पानी सड़ने लगता है। झील के ठहरे हुए पानी में मच्छर पैदा होंगे जिससे क्षेत्र में मलेरिया जैसे रोगों का प्रकोप बढ़ेगा। परियोजना में भारी-भरकम सुरंग बनायी जा रही है। इसके लिए भारी मात्रा में विस्फोटकों का उपयोग हो रहा है, इससे मकानों में दरारें आ गयी हैं। परियोजना के ये तमाम दुष्प्रभाव गरीब पर पड़ेंगे" (झुनझुनवाला, 2015)।

1991 के बाद भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का आगमन तीव्रता से हुआ और इसके मुक्त विचरण ने यहाँ के अनेक छोटे-बड़े औद्योगिक समूहों का सफाया कर दिया। राज्य बाजार के लिए एक प्रबन्धक की भूमिका में आ गया। स्वास्थ्य, सुरक्षा और शिक्षा जैसी मूलभूत चीजें भी बाजार द्वारा संचालित की जाने लगीं। कृषि के बाजारीकरण ने कृषि उत्पादन के वैविध्य, रोजगारपरकता और इसकी संरचना को समाप्त कर दिया (मार्कण्डेय एवं सिम्हाद्रि, 2011 तथा शिवा, 1988)। यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है कि कृषि का बाजारीकरण कोई नयी शुरुआत नहीं थी वरन् मुगल काल में भी इसका अस्तित्व था, लेकिन इसका विस्तार क्षेत्रीय स्तर और कुछ खास फसलों - सूत, तम्बाकू और गन्ना - तक ही सीमित था। फसलों के साथ-साथ भूमि का भी वस्तुकरण कर दिया गया (दास, 2012)। पहले जमीन से एक रागात्मक और सांस्कृतिक सम्बन्ध होता था, जिसे कालान्तर में मात्र एक वस्तु का रूप दे दिया गया। उत्पादन बाजार की जरूरतों के अनुकूल किया जाने लगा। किसान आत्महत्याएँ उन राज्यों में तीव्र हुईं जहाँ कृषि ज्यादा बाजारीकृत की गई। बाजार मुनाफे और घाटे के सिद्धान्तों द्वारा संचालित होता है, इसका न तो कोई सामाजिक सरोकार होता है और न ही पर्यावरणीय। मुनाफे की प्रवृत्ति ने संसाधनों का असन्तुलित और मनमाना दोहन किया जिससे प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर समुदाय विस्थापित भी हुए और आजीविकाविहीन भी। प्राकृतिक संसाधनों की लूट में सरकार और बड़ी कम्पनियों की मिलीभगत किस स्तर पर होती है, इस पर परांजय गुहा ठाकुरता ने एक पूरा प्रबन्ध लिखा है जिसमें उन्होंने कृष्णा-गोदावरी बेसिन के क्षेत्र में प्राकृतिक गैस की लूट में सरकार और रिलायंस कम्पनी की मिलीभगत का रहस्योद्घाटन किया (अम्बानी भाइयों में सम्पत्ति विवाद का मुख्य बिन्दु भी यही कृष्णा-गोदावरी बेसिन था (ठाकुरता, 2014)। सरकार के ऐसे अनेक मेगा प्रोजेक्ट ने विस्थापन और आजीविका की समस्या को जन्म दिया (चौधरी, 2014)। विस्थापन अपने आप में ही समस्याओं का एक समुच्चय है। वन्यजीव अभ्यारण्य के नाम पर भी मूलवासियों को जंगल के प्रयोग से रोका गया, यहाँ तक की जलावन की लकड़ियाँ भी प्रतिबन्धित कर दी गईं। महाराष्ट्र के बोरेवाली नेशनल पार्क से उपजी समस्या हो या भीमशंकर अभ्यारण्य से, या

फिर गिर नेशनल पार्क या फिर गिरनार से उपजी समस्या, इन सभी ने किसी न किसी रूप में वहाँ के लोगो की आजीविका को प्रभावित किया है। बाँध और पनबिजली परियोजनाओ ने भी लाखों की आजीविका को प्रभावित किया (चौधरी, 2014)। प्रश्न उठता है कि ये विकास किसके लिए किया जा रहा है? जबकि दुनिया की एक तिहाई भूखी जनसंख्या भारत में निवास करती है। 23 करोड़ से अधिक भारतीय रात में भूखे सोते हैं, 7000 से अधिक प्रतिदिन भुखमरी से मरते हैं, 50 प्रतिशत से अधिक बच्चे केवल भुखमरी से मरते हैं (एसआयएलआर, 2013)। आगामी 2020 तक भारत दुनिया का सबसे बड़ा शहरी आबादी वाला देश हो जायेगा और यह शहरीकरण कई समस्याओं को भी तेजी से बढ़ाएगा, मसलन पानी का अभाव, प्रदूषण, यातायात व्यवस्था, उर्जा की समस्या और अनेकानेक (गुहा, 2013)।

आधुनिक विकास मॉडल में ग्रामीण और आदिम व्यवस्था को तोड़ा गया और इसे एक पिछड़ा हुआ समाज माना गया (शिवा, 1988)। आश्चर्यजनक बात तो ये रही कि इस धारणा की शुरुआत आजादी के तुरत पश्चात् की नीतियों में भी सन्निहित थी। इनका विश्वास था कि शहरीकरण ही भारत का भविष्य है, ग्रामीण भारत तो कूपमण्डूक और जड़ है। केन्द्रीयकृत विकास और बाद की उदारवादी नीतियों ने धीरे-धीरे समूची सभ्यता को भी खतरे में डाल दिया। बेरोजगारी और गरीबी ने समूचे विकास सिद्धान्त को कठघरे में खड़ा कर दिया और विकास सिद्धान्त ने विकल्पों की तरफ भी पहल की। धारणीय सिद्धान्त और पर्यावरणीय नारीवाद इन्ही हताशा भरी स्थिति की वैकल्पिक पद्धतियाँ हैं (चौधरी, 2014)। लेकिन ये भी बाजारवादी व्यवस्था का षड़यन्त्र ही साबित हुआ।

बहराइच : एक परिचय

यह नेपाल की सीमा से सटा हुआ है। इसके निकटवर्ती जिले में बाराबंकी, लखीमपुर खीरी, सीतापुर, गोंडा और श्रावस्ती हैं। उत्तरी हिस्सा प्राकृतिक संसाधनों से पूर्ण है। चकिया, निशानगारा, बिछिया, बघौली, और मिहींपुरवा जंगलों से भरे हैं। 67000 हेक्टेयर वनाच्छादित है, जिसमे अकेले कर्तानियाघाट 40000 हेक्टेयर में विस्तीर्ण है। घाघरा, सरयू जैसी विशाल नदियाँ हैं जो वर्ष पर्यन्त भरी रहती हैं। बरसात में यह रौद्र रूप धारण करती हैं। यहाँ के जंगलों में बाघ, डॉल्फिन, अजगर, चीतल, भेड़िया, मगरमच्छ, जंगली सूअर जैसे जानवर हैं (बहराइच विकास पत्रिका, 2005)।

बहराइच देश के उन प्रमुख जिलों में से है जिसका न केवल पौराणिक अपितु ऐतिहासिक महत्व भी है। प्राचीन भारत में यह कोशल का हिस्सा हुआ करता था; कोशल की चर्चा 'शतपथब्राह्मण' में की गई है। हिन्दू शास्त्रीय ग्रन्थों के साथ-साथ बौद्ध साहित्य में भी इस क्षेत्र का महत्व है। सैयद सालार गाजी मसूद की दरगाह के कारण यह इस्लामिक धर्मावलम्बियों में भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। कहा जाता है कि उसकी धर्मान्धता के कारण हिन्दू (पासवान) राजा सुहेल देव ने उसकी हत्या कर दी थी जिस कारण यहाँ सुहेल देव की

स्मृति और सम्मान में भी प्रत्येक वर्ष एक मेले का आयोजन चितौरा झील के पास किया जाता है, जहाँ सुहेल देव की मूर्ति भी लगी है (शुक्ल, अप्रकाशित)।

भारतीय राष्ट्रवादी आन्दोलनों से यह क्षेत्र अछूता नहीं था बल्कि इसकी अहम् भागीदारी रही है। 7 फरवरी 1856 को जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अवध पर कब्जा किया तो उन्हें तीव्र प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। नानपारा (बहराइच) के फैजल अली ने मोर्चा खोल दिया, लेकिन उसे पराजित कर दिया गया। चल्हरी के राजा बलभद्र सिंह, बौण्डी नरेश हरदत्त सिंह, इकौना राजा उदित प्रताप सिंह आदि ने 1857 की लड़ाई में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था (बहराइच विकास पत्रिका, 2005)। बौण्डी पंचायत में किले के अवशेष के पास एक विशाल कूप के भी अवशेष है। कहा जाता है कि बेगम हजरत महल नेपाल इसी रास्ते से गई थी और जाते समय अपना कीमती सामान इसमें रखवा गई थी।

1857 के बाद के राष्ट्रीय आन्दोलनों में भी बहराइच की जनता का अवदान विशेष है। खिलाफत आन्दोलन के दौरान गाँधी के आह्वान पर मिहींपुरवा के लाला मैकूलाल, नानपारा के अकबर खान और नवल किशोर आदि ने गिरफ्तारियाँ दीं। आन्दोलन के समय बहराइच कांग्रेस का कितना बड़ा केन्द्र था यह अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि खादी उत्पादन में यह राज्य में दूसरे स्थान पर था। 1929 में बहराइच राजकीय हाई स्कूल में गाँधी ने एक जनसभा को सम्बोधित भी किया था और जनता ने 3500 रुपये आन्दोलन कोष में जमा किये (बहराइच विकास पत्रिका, 2005)।

औपनिवेशिक युग में किसान शोषण के फलस्वरूप अवध क्षेत्र में अनेक किसान आन्दोलन भी पनपे और बहराइच भी इस आन्दोलन का अभिन्न हिस्सा बना। कहा जाता है कि प्रसिद्ध किसान नेता बाबा रामचन्द्र 5 जनवरी, 1921 को किसानों को संगठित करने बहराइच आये थे। अवध के किसानों की दुर्दशा से प्रेरित होकर नेहरू भी 6 अक्टूबर, 1931 को गोंडा आये और यहाँ के किसानो की समस्या को सुना। औपनिवेशिक नीतियों ने यहाँ के किसानों को दरिद्र बना दिया था जिसे 13 जनवरी, 1921 को वाइसराय ने स्वयं इस प्रकार उद्धृत किया - "अवध क्षेत्र में जमींदारी व्यवस्था अन्य क्षेत्रों की तुलना में दमनकारी थीं।....." कृषि के राष्ट्रीय आयोग के अनुसार उत्तर प्रदेश में गरीबी का ग्राफ भारत के अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक था (पांडेय, 1982)।

अतीत की त्रासदी

नदियों और नेपाल से सटे होने के कारण यह क्षेत्र प्राय: प्रत्येक वर्ष बाढ़ से प्रभावित होता है। ज्ञात इतिहास में 1922 से 1925 के बीच यह बाढ़ से बुरी तरह प्रभावित हुआ था। 1946, 1954, 1955, 1960, 1961 और 1963 भी बाढ़ के वर्ष थे, लेकिन 1969 की आपदा विगत वर्षों की तुलना में ज्यादा ही भयानक थी। 1978, 1980, 1981, 1982 और 1983 भी प्रभावित वर्ष थे। 1983 में गिरिजा बैराज से अचानक छोड़े गये पानी की वजह से भयानक तबाही मची, यद्यपि इस वर्ष वर्षा विशेष नहीं हुई थी। पानी छोड़ने से पूर्व सूचना का नहीं दिया

जाना अनेक ग्रामीणों की मौत की वजह बना। 1986, 1987, 1988 भी बाढ़ से अछूता नहीं था। 1990 में बाढ़ से दो तहसील ज्यादा प्रभावित हुईं। वर्ष 1991 में बाढ़ तो नहीं आई लेकिन घाघरा द्वारा मृदा अपरदन के कारण नानपारा, कैसरगंज और भिनगा तहसील की हजारों बीघा जमीन, फसल और आवास नदी में समा गये। पुन: 1992 में बाढ़ ने अनेक गाँवों को अपना शिकार बनाया। 1993 में जिले में पिछले 22 सालों के रिकॉर्ड को तोड़ते हुए वर्षा 424.81 मिमी हुई जिससे भयानक बाढ़ आई। 1998 भी बाढ़ की त्रासदी का साल रहा। नेपाल द्वारा पानी छोड़ने से नानपारा तहसील बुरी तरह शिकार बनी। इस वर्ष मृदा अपरदन की गति भी तीव्र रही जिससे हजारों परिवार विस्थापित हुए। वर्ष 2000 की बाढ़ ने यहाँ की स्थिति को और भी दयनीय बना दिया। गोपिया बैराज से पानी छूटने से हजारों लोग फिर से विस्थापित हुए और कई जानें गयीं। 2000 के बाद से 2014 तक बाढ़ और मृदा अपरदन की वजह से यहाँ के अनेक गाँव नदी में समा गये और विस्थापितों की संख्या में हजारों की बढ़ोतरी हुई और यह आज तक जारी है।

2014 की बाढ़ : विध्वंस से साक्षात्कार

अनवरत और अन्तहीन आपदा के कारण यहाँ के लोगों ने बाढ़ को अपनी नियति मान लिया है और चुपचाप या तो अल्प संसाधनों के साथ अस्तित्व को बचाने का प्रयास करते हैं या फिर धीरे-धीरे क्षेत्र ही छोड़ देते हैं और आसपास के शहरों की भीड़ में गुम हो जाते हैं। सन 2014 का वर्ष उनकी त्रासदी में गुणात्मक अभिवृद्धि का वर्ष था। उत्तर प्रदेश का बड़ा भूभाग बाढ़ की चपेट में आया जिसमें बहराइच, श्रावस्ती, बलरामपुर, गोंडा, बाराबंकी, लखीमपुर खीरी, सीतापुर, फैजाबाद, बस्ती, सन्त कबीर नगर, आजमगढ़, मुजफ्फर नगर और सिद्धार्थ नगर मुख्य थे। केवल बहराइच में कम से कम 200 गाँव जलमग्न हो गये जिनमें से कई गाँवो के अवशेष भी नहीं बचे। नानपारा के 130 गाँव, मेहसी के 44 और कैसरगंज के 28 गाँव जलप्लावित हो गये थे।

पूरे उत्तरप्रदेश में कई मौते हुईं। दैनिक 'द हिन्दू' के अनुसार- "UP flood situation grave, toll mounts to 89....." (द हिन्दू, 2014)। बहराइच में मरने वालों का अनुमान सरकार ने 25 लगाया जो वास्तविक संख्या से काफी कम है। सरकारी आँकड़े प्राप्त शवों के आधार पर संख्या का निर्धारण करते हैं। जो बह गये और बरामद नहीं किये जा सके उनकी गणना नहीं की जाती। उदाहरण के लिए जोगापुरवा गाँव के रामभजन कश्यप ने बताया कि गाँव के एक दलित (प्यारे चमार) का 12-13 साल का लड़का तेज धार में बह गया, लेकिन उसके परिवार को मुवावजा मिलना तो दूर उसे मृत मानने से भी इनकार कर दिया गया। इस तरह के अनेक मामले यहाँ देखने सुनने को मिले। बाढ़ और विस्थापन पर कार्य कर रही संस्था से जुड़ी पल्लवी के अनुसार यहाँ प्रत्येक बाढ़ में जितने लोग मरते हैं और जितने सरकारी रिपोर्ट में दर्ज किये जाते हैं उनमे भारी अन्तर रहता है। कर्तानियाघाट में आदिवासियों की आजीविका पर कार्य कर रहे संस्था के प्रमुख बिजेन्द्र सिंह कहते हैं - "इसका कोई सही

अनुमान नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि नेपाल में तो कई गाँव सीधे सीधे साफ हो गये और अनेक लाशें तो यहाँ तक बह-बह कर आती थीं।" बाढ़ करीब 20-22 दिनों तक जमी रही और इस दौरान परिवहन, स्वास्थ्य, रोजगार, आवास, शिक्षा जैसी तमाम बुनियादी चीजें ध्वस्त होती रहीं। बाढ़ ने आजीविका की संरचना के जिन हिस्सों पर प्रहार किया उनमें मुख्य विस्थापन और आवास, कृषि, मजदूरी और शिल्प या घरेलु छोटे उद्योग, पशुपालन और 'सामाजिक-बिखराव' प्रमुख हैं।

बाढ़ और तेज कटान के कारण कई गाँव पानी में चले गये। लोग अपना घर-बार त्याग कर इधर-उधर भटकते रहे जिनमें से कईयों ने बाँध पर शरण ली। यह मेरे लिए घोर आश्चर्य का विषय था की अपने अध्ययन हेतु चयनित गाँव जोगापुरवा आदि के 2-3 परिवारों को छोड़कर सभी का विस्थापन पिछले 10 वर्षों के दौरान 4 से 6 बार हुआ है। उन्होंने अपने मकानों को कई बार बनाया और कई बार बाढ़ में बहते देखा है। जिनके पक्के मकान थे, वे सब अब झोपड़ियों के निवासी हैं। गाँव का ही दीपक - जो अब तक चार बार विस्थपित हो चुका है - ने कहा - "2000 में घर कटा था। 2000 से शुरू हुआ तो 2014 तक चार बार घर कटा है"।

कटान और बाढ़ के कारण जिन-जिन गाँवों से विस्थापन हुआ और जो गाँव मिट गये उनमे से कुछ निम्न हैं -

गाँव	डूबने का वर्ष	विस्थापित लोग
खरगपुर	1968	10000
गंगापुर	1994	4000
पंचादुपुर	1998	4000
बहरपुर	1998	5000
सिलौटा	2001	7000
उमरिया	2001	3000
भौरी सिपहिया	2002	8000
मुन्सारी	2003	4000
मैकपुरवा	2003	6000
संसारी	2004	2500
कपरौल	2004	4000
गोलागंज	2006	8000
मगरौल	2007	7000
पिपरी	2007	4000
बांसगढ़ी	2011-12	6000
तारापुरवा	2012	3000
जरवल	2012	4000
बौण्डी	2012	3000
कायमपुर	2014-15	3000
जोगापुरवा	2014-15	5000

स्रोत : सुपर आयडिया (मासिक पत्रिका) वर्ष 1, अंक 2, सितम्बर 2015।

आजीविका और जीवन के बदलते प्रतिमान

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि विस्थापन की समस्या वर्ष 2000 से ज्यादा तीव्र हुई है, इससे पूर्व इसकी गति धीमी थी। इसकी मुख्य वजह निरन्तर अनियोजित बाँधों और पुलियाओं का बनना और अवैध बालू खनन में वृद्धि है जिसने सामान्य बाढ़ को वीभत्स बनाने में मदद की। पहले यहाँ विविध फसलें उपजती थीं और अधिकांश जनसंख्या की रोजी-रोटी कृषि से ही चलती थी। लेकिन बाढ़ ने अब कृषि के उत्पाद के वैविध्य और प्रचुरता को बाधित कर दिया है। केवल कुछ फसलें ही अब उपजाई जाती हैं। बाढ़ से खेत कट गये या फिर उनमे रेत भर गई जिसमे उपज की सम्भावना समाप्त हो जाती है। उनमें कुछ लोग खरबूजे और ककड़ियों का उत्पादन तो करते हैं, लेकिन यह वैसी फसल नहीं जिस पर आजीविका पूर्ण निर्भर रह सके। अधिकांश लोग जो कई बीघे के जोतदार थे वे भूमिहीन किसान हो गये, जैसे कमलेश कश्यप 40 बीघे, किशन चमार 6 बीघे, बलिराम कहार 6 बीघे और फूलमती देवी 6 बीघे के जोत के मालिक थे लेकिन अब कमलेश के पास 10 बीघे बचे हैं और शेष भूमिहीन हो चुके हैं। ऐसे में खेती कर पाना सम्भव नहीं। अगर वो किसी दूसरे के खेत में भी कृषि करें तो इसके लिए भी कृषि योग्य भूमि का अभाव है।

कृषि के अलावा मजदूरी उनकी रोजी-रोटी का मुख्य स्रोत है, लेकिन अब मजदूरी मिलना भी उनके लिए मुश्किल है, परिणामत: वो पलायन कर रहे हैं। बौण्डी पंचायत का करीब 60 प्रतिशत भाग पलायन कर चुका है। मनरेगा से भी उन्हें विशेष फायदा नहीं मिला। साल में उन्हें 5-6 दिन कार्य मिल जाए यही बहुत है। ग्राम अधिकारियों और प्रतिनिधियों का कहना है कि जब जमीन ही नहीं है तो उन्हें कार्य कैसे दिया जाये। जहाँ कार्य हो भी रहा है वहाँ मशीनों के प्रयोग से वे वंचित हो जा रहे हैं। दलित बस्ती के हजारी का कहना था - "कारड पहीले रहे, अब नाहीं है। एक बार काम मिला था अब नाही मिलत है। हियाँ पुलिया वाला काम होत है जे मे ट्राली लागा है"। सिलौटा के ग्रामप्रधान वर्माजी का कहना था कि मनरेगा से यहाँ कोई फायदा नहीं है, काम कहाँ दिया जाए ये तो समस्या है ही और अगर काम मिल भी गया तो पेमेंट में देरी सरकारी मशीनरी के कारण हो ही जाती है, जबकि यहाँ लोग रोज कमाने वाले और रोज खाने वाले हैं, जिस दिन काम न मिला तो ये भूखे सोते हैं। गाँव में निर्माण कार्य न तो सरकारी स्तर पर और न व्यक्तिगत स्तर पर ही हो रहा है, अत: मजदूरी मिलना कठिन हो जाता है। वे पहले खेतों में मजदूरी करते थे लेकिन भूमि तो पहले से ही संकट में है।

पूर्व में यहाँ कई ऐसे जंगली झाड़-झंकार उगते थे जिनसे ये कई घरेलू और अन्य जरुरी सामानों को बना लिया करते थे, लेकिन अब ये दुर्लभ हो चुके हैं। इनसे बने सामानों को अपने प्रयोग में रखने के अलावा ये इन्हें गाँव के पास के छोटे बाजारों में बेच दिया करते थे जिनसे मिले पैसों से ये अन्य जरूरी सामान खरीदते थे, लेकिन अब ऐसे पौधों का ही नहीं अपितु इसे बनाने वाले कारीगरों का भी अभाव हो रहा है।

जोगापुरवा की लक्ष्मीदेवी ने बताया की उसने काफी पैसे और जेवर धरती में दबा रखे थे और जब बाढ़ आई तो सब बह गये। लोग अब यहाँ तात्कालिक झोपड़ियाँ बनाते हैं

क्योंकि पता नहीं फिर कब उन्हें अपना घर छोड़ना पड़े। ऐसी असुरक्षित स्थिति में इन झोपड़ियों में वे अपने कीमती सामान जमीन में गाड़ कर रखते हैं। अनेक ऐसे लोग थे जिन्होंने काफी मात्रा में अनाज संचित कर रखा था, लेकिन ये सब के सब जल के साथ मिल गये। तेज गति से आती बाढ़ इतना मौका नहीं देती कि भारी सामानों को सुरक्षित निकाला जा सके। बाढ़ के कारण कई जीव नदी में बह गये, जिनमें खासकर छोटे जीव जैसे भेड़ और बकरियाँ थीं। बड़े मवेशी बाढ़ के दौरान पानी में ही खूँटे पर भूखे बँधे रहे, जिनमें से कई बाद में बीमारी से मर गये।

जो सबसे बुरा प्रभाव पड़ा वह सामाजिक संरचना पर था। जब गाँव कटे तो कई-कई हजार लोग इधर-उधर आश्रय के लिए फैल गये। जो पडोसी थे और जो सुख-दु:ख में एक दूसरे के साथ होते थे उनके स्थान पर वे नये लोगों से घिर गये। जिस समाज और नातेदारी को बनने में कई सौ साल लगते हैं वो एक झटके में ही बिखर गये। नये लोगों के साथ अन्त:क्रिया करना, खासकर विस्थापित लोगों के लिए, काफी मुश्किल भरा होता है। सिलौटा आदि गाँवों के लोग कहाँ गये, ये उनके पड़ोस के गाँव के लोग भी नहीं बता सकते। किसी-किसी के तो अपने सगे भाई से मुलाकात यदा-कदा ही हो पाती है। सिलौटा के कुछ लोग बाँध के किनारे किसी तरह पिछले 10 सालों से अस्तित्व बचाने का प्रयास कर रहे हैं। कायमपुर दो वर्षों के भीतर ही तितर-बितर हो गया। बाँध पर रहने वालों की संख्या हजारों में है जो कई अलग-अलग गाँवों से आकर बसे हैं।

कोई भी व्यवस्था की पहली शर्त उसका स्थिर होना है, लेकिन आपदा ने यहाँ कभी किसी को एक जगह ठहरने ही नहीं दिया। इसने इनके जीवन और संस्कृति को आमूल-चूल तरीके से बदल दिया। पारम्परिक खेती और इसकी विविधता, पारम्परिक चिकित्सा, लोककला, संगीत, सब तेजी से स्याह पृष्ठभूमि में खोते चले गये। एक स्थिर और धारणीय अर्थव्यवस्था के बदले उनका जीवन आजीविका के तात्कालिक और अल्प स्रोतों पर निर्भर हो गया। आजीविका जो पहले 'पारम्परिक रूप से औपचारिक' थी, अब इतनी अनौपचारिक और अस्थिर हो गयी है जिसने एक असुरक्षा बोध को जन्म दिया और यह बोध भविष्य निर्माण की किसी भी योजना को ध्वस्त करता है।

त्रासदी के उत्प्रेरक

सामान्य तौर पर इस क्षेत्र के लोग बाढ़ आने की दो ही वजह बताते हैं, एक तो तेज बारिश और दूसरा नेपाल की नदियों से छोडा गया पानी। इनके अलावा जो अन्य कारण हैं वो निम्नानुसार हैं -

अनियोजित बाँध

इन क्षेत्रो में अनेक छोटे-बड़े बाँध हैं, जैसे 40 के दशक में एक विशाल बाढ़ के कारण बाढ़ का पानी शहर में प्रवेश कर गया था, जिस कारण शहरी क्षेत्र को बाढ़ से बचाने के

लिए एक काफी लम्बा बाँध बनाया गया था और तब से अब तक अनेकों छोटे-बड़े बाँध बनाए जा चुके हैं। इसके बनने से शहर में पानी का प्रवेश तो बन्द हो गया लेकिन बाँध के दूसरी तरफ की ग्रामीण आबादी बुरी तरह प्रभावित हुई। पहले पानी फैल जाता था, लेकिन उसके बाद पानी के निकलने का रास्ता बन्द हो गया। सन् 2000 के बाद से बाढ़ ने इसी कारण ज्यादा तबाही मचाई है। फूलमतीदेवी कहती हैं - "पहीले इत्ता पानी नाही आवत रहे, अब ता डूबे लागिहन"।

अवैध बालू खनन

नदियों से व्यापक पैमाने पर अवैध बालू का खनन किया जा रहा है और इसमें माफियाओं की साँठ-गाँठ राजनीतिज्ञों और सरकारी अधिकारियों से भी है जिस कारण इनका विरोध ग्रामीण नहीं कर पाते। जोगापुरवा के ही रामभजन ने बताया कि यह खनन रात और दिन लगातार चलता रहता है। खनन से नदी कटान की गति तीव्र हो जाती है।

नेपाल से छोड़े गये पानी की पूर्व सूचना का अभाव

नेपाल से जब पानी छोड़ा जाता है तो सरकारी तन्त्र अक्सर पूर्व सूचना देने में लापरवाही बरतते हैं और अगर सूचना दे भी दी जाती है तो बाढ़ से पूर्व की तैयारी उचित तरीके से नहीं की जाती। सामाजिक कार्यकर्ता राजेश त्रिपाठी का कहना है - "जब बाढ़ का समय नहीं होता तो ये अधिकारी सोये रहते हैं और बरसात के मौसम में पुल-पुलिया बनाना प्रारम्भ करते हैं"।

राज्य की भूमिका

पारम्परिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन में राज्य को केवल शान्ति और व्यवस्था बनाने वाली संस्था नहीं माना गया है वरन् राज्य से यह अपेक्षा की गयी है कि वह लोककल्याण के नैतिक और सामाजिक एवं आर्थिक कर्तव्यों का भी निर्वहन करे। इसका प्रमाण अशोक जैसे शासकों के चरित्र में ही नहीं अपितु कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी व्यापक रूप से दिया गया है (आचार्य, 2007)। बहराइच के बौण्डी पंचायत की स्थिति का मूल्यांकन किया जाये तो यह बात सामने आती है कि राज्य अपनी भूमिका का निर्वहन उचित स्तर पर करने में अक्षम रहा है। आपदा और संकट के समय राज्य की भूमिका बढ़ जानी चाहिए लेकिन यहाँ सरकारी भूमिका कागजी खानापूर्ति तक ही है। सुदूरवर्ती क्षेत्र आपदा की पूर्व सूचना नहीं पाते हैं जिससे उन्हें भारी नुकसान उठाना पड़ता है और जहाँ सूचना पहुँचाई भी जाती है, वहाँ कोई वैकल्पिक व्यवस्था नहीं की जाती है। यहाँ तक कि जिस कटान से कृषि और आवासीय समस्या उपजती है उसे रोकने का कोई ठोस प्रयास भी नहीं किया जाता है। कटान की मुख्य वजह तेज गति के पानी के साथ-साथ अवैध बालू खनन है और इन बालू माफियाओं को सरकारी और प्रशासनिक संरक्षण भी प्राप्त है, जिस कारण यह कारोबार रात-दिन चलता रहता है।

आपदा के दौरान जब गाँव के लोग किसी ऊँचे स्थान पर आश्रय लेते हैं तो उन्हें कई दिनों तक भूखे भी रहना पड़ता है। सबसे बड़ी समस्या तो जलावन की लकड़ियों की होती है। कभी-कभी इन गाँव वालों को बाढ़ में बहकर आये लकड़ी के बड़े-बड़े लठ्ठे मिल भी जाते हैं लेकिन यह सौभाग्य सभी को नहीं मिल पाता है। सरकारी स्तर पर या निजी संस्थाओं द्वारा कभी-कभी पूरी-सब्जी का वितरण करवा कर प्रशासन आत्ममुग्ध रहता है, लेकिन इससे उनके भोजन की समस्या समाप्त नहीं होती।

बाढ़ के बाद एक बड़ी समस्या उत्पन्न होती है, भूमि की। बाढ़ के बाद भूमि का सीमांकन टूट जाने के कारण लोग अपनी-अपनी जमीन की पैमाइश नहीं कर पाते हैं। इसके लिए वे लेखपाल के पास दरख्वास्त करते हैं, लेकिन सामान्य तौर पर वे आते नहीं और अगर आने को तैयार भी होते हैं तो इसके एवज में मोटी रकम की माँग करते हैं। फलत: इसका फायदा प्रभुत्वशाली लोग उठा लेते हैं और अपनी जमीन के साथ वे दूसरे लोगों की जमीन को भी हड़प लेते हैं।

इस क्षेत्र में मछली का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है। इसका पट्टा दिया जाता है किन्तु यह पट्टा हमेशा प्रभावशाली लोग ही ले लेते हैं। जैसे, इस बार जोगापुरवा का पट्टा बिना नीलामी के ही ग्रामप्रधान को दे दिया गया। एक बड़ी समस्या तो तब आती है जब बरसात के दौरान क्षेत्रीय माफिया किसानों को उनके अपने खेतों से भी मछली मारने से रोक देते हैं और साल के वे महिने, जिनमें मछली का उत्पादन ज्यादा होता है, किसानों को जलीय संसाधनों से वंचित कर दिया जाता है। इस बात को लेकर इस क्षेत्र में कई बार संघर्ष की नौबत भी आ जाती है लेकिन गाँव के ही पिछड़ी जाति के ग्रामप्रधान प्रत्याशी नन्कुआ मेठ के अनुसार - "हम गरीब आदमी हैं, हमें ही झुकना पड़ता है क्योंकि पुलिस वाले बड़े लोगो के साथ हो जाते हैं"।

ऐसा नहीं है कि बाढ़ से हुए नुकसान से उबरने के लिए सरकार की तरफ से किसी मुवावजे या किसी राशि के वितरण की योजना नहीं है, लेकिन मुख्य समस्या प्रदान की गयी राशि और नुकसान हुई सम्पत्ति के बीच का अन्तर और वास्तविक पीड़ितों की पहचान करना है। सरकार के द्वारा जो निर्धारित राशि है वो इस प्रकार है - पूरी तरह से नष्ट पक्का मकान - 70000, पूरी तरह से नष्ट कच्चा मकान - 17600, बुरी तरह से प्रभावित पक्का मकान - 12600, बुरी तरह से प्रभावित कच्चा मकान - 3600, आंशिक नष्ट पक्का मकान - 3800, आंशिक नष्ट कच्चा मकान - 2300, नष्ट झोपड़ी - 3000, नष्ट मवेशी झोपड़ी - 1500 (अमर उजाला, 15 सितम्बर, 2014)।

एक पत्रिका के अनुसार तो कुछ क्षेत्रों में आधे से अधिक आवेदक फर्जी पाये गये थे (सुपर आईडिया, 2012)। जोगापुरवा के ही भूपेन्द्र ने कहा - "मेरा मकान और जमीन कट गया लेकिन कुछ नहीं मिला। प्रधान से पूछा तो कहिन कि सरकार हर साल खैरात नहीं बंटात है"। इसी तरह की बात प्रशान्त ने भी कही - "मेरा सब फसल नष्ट हो गया लेकिन कुछ नहीं मिला"। अधिकांश तो ऐसे लोग हैं जिन्होंने अपनी लाखों की जमीन, बगीचे, फसल, घर आदि

खोये हैं लेकिन मुवावजे के नाम पर उन्हें 1500-1500 रुपये थमा दिये गये हैं जो निर्धारित थे। उनके बँटवारे में भी नियमों का पालन नहीं किया गया। बाढ़ के दौरान सरकार के द्वारा 55.41 करोड़ पीडितों के लिए भेजे गये (द हिन्दू, 2014) लेकिन ये किन मदों में खर्च हुए ये तय करना मुश्किल है। बाढ़ आने के जो कारण हैं, उसके निबटारे की तरफ सरकार का ध्यान कम है। सरकारी मशीनरी तो ऐसा लगता है कि बस बाढ़ के इन्तजार में ही रहती है, क्योंकि बाढ़ में सरकारी और गैरसरकारी स्रोतों से भारी धनराशि भेजी जाती है जिसका ये दुरुपयोग करते हैं। इस बाढ़ में तो राज्य सरकार के कई बड़े मन्त्रियों और अधिकारियों पर बाढ़ राशि में भ्रष्टाचार के आरोप लगे हैं। बाढ़ के दौरान, पूर्व या उपरान्त सरकार की ऐसी कोई कार्यनीति नहीं थी जो यहाँ आजीविका के स्तर को सुधार सके या कोई वैकल्पिक साधन ही दे सके। इन क्षेत्रों में बाढ़ से आजीविका के साधन नष्ट होने से पलायन भी तेजी से हुआ है। जिला अधिकारी कार्यालय के ऋषिराज वाजपेयी के शब्दों में - "बौण्डी एक समय काफी बड़ा बाजार था, काफी जनसंख्या थी यहाँ, लेकिन निरन्तर बाढ़ के कारण 70 फीसदी आबादी रोजगार के अभाव में पलायन कर चुकी है..... हर साल पीड़ित आवेदन देते हैं लेकिन यह एक परम्परा की तरह है जिसका कोई परिणाम नहीं निकलता। आवेदन और मुद्दे फाइलों में दबे रह जाते हैं"।

निष्कर्ष

बाढ़ का आना स्वाभाविक है, लेकिन बाढ़ का आपदा में तब्दील हो जाना प्राकृतिक से अधिक मानवीय विकास नीतियों का प्रतिफल है। वर्तमान विकास नीतियाँ शहरोन्मुखी हैं। इसके एजेंडे से गाँव का सम्बन्ध कम है। पूरा विमर्श शहर और इसके मध्य और उच्च वर्गों को ध्यान में रखकर हो रहा है, जबकि भारत का सबसे बड़ा हिस्सा आज भी गाँवों में ही है। पारम्परिक रोजगार या जीवनशैली को तोड़ना और प्रतिगामी मानना एक नकारात्मक प्रवृत्ति है। निरन्तर आने वाली आपदा एक गम्भीर विमर्श बन चुका है। अत एव इस पर एक स्थायी तथा ग्रामीण और जनजाति केन्द्रित रणनीति बनाने कि आवश्यकता है।

सन्दर्भ

अली. एम. इकबाल एण्ड भास्कर (सम्पा.) (2011), *डब्ल्यूटीओ, ग्लोबलाइजेशन एण्ड इण्डियन एग्रीकल्चर,* न्यू सेंचूरी पब्लिकेशंस, नई दिल्ली.

आचार्य, नन्दकिशोर, (2007), *संस्कृति की सभ्यता,* वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर.

इवांस, मार्टिन एवं मोहल्दीन, यासिर, (2002), 'एनवायर्नमेंटल चेन्ज एण्ड लाइवलीहुड स्ट्रेटेजीस : द केस ऑफ लेक चाड', *जियोग्राफिकल एसोसिएशन,* भाग 87, जनवरी.

इंडिया डिज़ास्टर रिपोर्ट, 2014

गुहा, रामचन्द्र, (2013), *उपभोग की लक्ष्मण रेखा,* पेंग्विन बुक्स, नई दिल्ली.

चन्द्रा, बिपिन, (1989), *इण्डियाज़ स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस,* पेंग्विन बुक्स, नई दिल्ली.

चैम्बर्स, आर. एवं कोनवे, जी., (1992), 'सस्टेनेबल रूरल लाइवलीहुड: प्रेक्टिकल कांसेप्ट्स फॉर द 21 सेंचुरी', *डिस्कशन पेपर नं. 296*, इंस्टीट्यूट फॉर डेवलपमेण्ट स्टडीज़, ब्राइटन.

चौधरी, सुकान्त के., (सम्पा.) (2014), *सोशियोलॉजी ऑफ एनवायर्नमेंट*, सेज़ पब्लिकेशंस, नई दिल्ली.

झुनझुनवाला, भरत, (2015) 'गरीबी उन्मूलन पर विश्व बैंक का ढोंग', *प्रभात खबर*, जुलाई, 14.

टू, जे., (2003), जेण्डर, *ग्लोबलाइजेशन एण्ड पोस्ट कोलोनिलिज्म: द चेक रिपब्लिक आफ्टर कम्यूनिज्म*, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क.

ठाकुरता, परंजॉय गुहा, घोष, सुबीर एवं चौधरी, ज्योतिर्मय, (2014), *गैस वॉर्स : क्रोनी केपिटलिज्म एण्ड द अंबानीज*, सौरभ प्रिंटर्स, नई दिल्ली.

द हिन्दू, अगस्त 22, 2014.

दास, वीना, (सम्पा.) (2012), *हैण्डबुक ऑफ इंडियन सोशियोलॉजी*, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

पाण्डेय, ज्ञानेन्द्र, (1982), 'पीज़ेण्ट रिवोल्ट एण्ड इंडियन नेशनलिज्म: द पीज़ेण्ट मूवमेट इन अवध', रणजीत गुहा (सम्पा) *सबअल्टर्न स्टडीज़*, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

बसु, डी.डी., (2011), *द कांस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया*, बटरवर्थ वाधवा एण्ड कं. नागपुर.

बहराईच विकास पत्रिका 2004-05, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, बहराईच.

बिड़वई, प्रफुल्ल, (2013), *इण्डिया फ्लड्स: ए मेन मेड डिज़ास्टर*, द गार्जियन, जून, 2013.

मार्कण्डेय, कल्पना एवं सिम्हांद्रि, एस. (सम्पा.) (2011), *ग्लोबलाइजेशन, एनवायर्नमेंट एण्ड ह्यूमन डेवलपमेंट*, रावत पब्लिकेशंस, नई दिल्ली.

यूएन (2008) *नेपाल : कोसी फ्लड - ओसीएचए सप्तारी सिचूएशन रिपोर्ट 2008*, यूएन ऑफिस फॉर द कोर्डिनेशन ऑफ ह्यूमेनेटेरियन अफेयर्स.

रेड्डी, सुनीता, (2013), *क्लैश ऑफ वेव्स*, इंडोस बुक्स, नई दिल्ली.

शिवा, वन्दना, (1988), *स्टेइंग अलाइव: वुमन, इकोलॉजी एण्ड सर्वाइवल इन इण्डिया*, काली फॉर वुमन, नई दिल्ली.

शुक्ल, गोपाल, *ऐतिहासिक कालखण्ड के पृष्ठ*, अप्रकाशित.

स्मिथ, ओ., एंथनी एण्ड हाफमैन, एम., सुसान, (सम्पा.) (1999), *द एंग्री अर्थ*, राउटलेज़, न्यूयार्क.

स्टेट ऑफ इण्डियाज़ लाइवलीहुड रिपोर्ट, 2013, सेज़ पब्लिकेशंस, नई दिल्ली.

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 50-56)

निर्माण क्षेत्र के श्रमिकों के अधिकार एवं योजनाओं का समलोचनात्मक अध्ययन

मोनिका चौधरी*

मजदूरों के एक लम्बे संघर्ष के बाद वर्ष 1996 में निर्माण मजदूरों के लिए दो महत्वपूर्ण कानून राष्ट्रीय स्तर पर बनाये गये। ये दो कानून हैं - भवन तथा निर्माण मजदूर (रोजगार और सेवा स्थितियों का नियमन) अधिनियम 1996 और भवन तथा अन्य निर्माण मजदूर कल्याण उपकर अधिनियम, 1996। इन दोनों कानूनों के अन्तर्गत विभिन्न निर्माण मजदूरों का पंजीयन किया जाता है और उन्हें उपकर से प्राप्त धनराशि से सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न लाभ उपलब्ध करवाये जाते हैं। सम्पूर्ण राष्ट्र और समाज की प्रगति, समृद्धि तथा खुशहाली में श्रमिकों के योगदान को नमन करना चाहिये। देश ने उत्पादन में वृद्धि और अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जो उच्च मानक हासिल किये हैं वह हमारे श्रमिकों के अथक प्रयासों का ही नतीजा है।

मजदूर समाज का वह तबका है जिस पर समस्त आर्थिक उन्नति टिकी है। मजदूर मानवीय श्रम का सबसे आदर्श उदाहरण है। वह सभी प्रकार के क्रियाकलापों की धुरी है। आज के मशीनी युग में भी उसकी महत्ता कम नहीं हुई है। उद्योग, व्यापार, कृषि, भवन, पुल एवं सड़क निर्माण आदि क्रियाकलापों में मजदूरों के श्रम का योगदान महत्वपूर्ण होता है।

*राजनीति विज्ञान विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)
E-mail: monika100683@gmail.com

हमारे देश में कृषि के बाद सबसे अधिक रोजगार का स्रोत निर्माण क्षेत्र में ही है। यहाँ तक कि अनेक किसान और खेत मजदूर भी कठिन समय में निर्माण क्षेत्र से ही कुछ आय अर्जन करते हैं। प्रवासी मजदूरों के लिए भी रोजगार का सबसे बड़ा साधन यही क्षेत्र है।

मजदूर अपना श्रम बेचता है। बदले में वह न्यूनतम मजदूरी प्राप्त करता है। उसका जीवन-यापन दैनिक मजदूरी के आधार पर होता है। जब तक वह काम कर पाने में सक्षम होता है तब तक उसका गुजारा होता रहता है लेकिन जिस दिन वह अशक्त होकर काम छोड़ देता है, उस दिन से वह दूसरों पर निर्भर हो जाता है। भारत में असंगठित क्षेत्र के मजदूरों की तो यही स्थिति है। असंगठित क्षेत्र के मजदूरों की न केवल मजदूरी कम होती है, अपितु उन्हें किसी भी प्रकार की सामाजिक सुरक्षा भी प्राप्त नहीं होती।

मजदूरों के लिए प्रान्तीय तथा केन्द्र सरकार की ओर से समय-समय पर कल्याणकारी योजनाओं की घोषणा की जाती है। रोजगार गारंटी कार्यक्रम के अधीन ग्रामीण क्षेत्र के मजदूरों के लिए कम से कम सौ दिन के रोजगार या बेरोजगारी भत्ते की व्यवस्था की गयी है। इन कदमों से मजदूरों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार हुआ है।

मजदूरों के एक लम्बे संघर्ष के बाद साल 1996 में निर्माण मजदूरों के लिए दो महत्वपूर्ण कानून राष्ट्रीय स्तर पर बनाये गये। ये दो कानून हैं - भवन तथा निर्माण मजदूर (रोजगार और सेवा स्थितियों का नियमन) अधिनियम 1996 और भवन तथा अन्य निर्माण मजदूर कल्याण उपकर अधिनियम, 1996।

इन दो कानूनों के अन्तर्गत विभिन्न निर्माण मजदूरों का पंजीयन किया जाता है और उन्हें उपकर से प्राप्त धनराशि से सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न लाभ उपलब्ध करवाये जाते हैं।

विभिन्न केन्द्रीय श्रमिक संगठनों की भागीदारी से निर्माण मजदूरों की राष्ट्रीय अभियान समिति ने 12 वर्षों तक सतत प्रयास किया जिसके फलस्वरूप ये अधिनियम बने। अन्य प्रावधानों के अतिरिक्त इन कानूनों में यह व्यवस्था भी है कि जो नया निर्माण कार्य हो, उसकी कुल लागत के एक प्रतिशत का उपकर लगाया जाये। इस तरह से जो भी धनराशि उपलब्ध हो उसे निर्माण मजदूरों के कल्याण बोर्ड में जमा की जाये और इस धनराशि से निर्माण मजदूरों की भलाई के बहुपक्षीय कार्य किये जाये जैसे - पेंशन, दुर्घटना के वक्त सहायता, आवास कर्ज, बीमा, मातृत्व सहायता, बच्चों की शिक्षा आदि।

इन कानूनों में जो प्रावधान हैं उसके तहत जैसे-जैसे निर्माण कार्य बढ़ेंगे या महँगाई बढ़ेगी, मजदूरों की भलाई के लिए उपकर के माध्यम से जमा पैसा भी अपने आप बढ़ता रहेगा। 1996 के कानूनों के अन्तर्गत राज्य स्तर पर 36 बोर्ड बन चुके हैं। चार करोड़ मजदूरों का पंजीयन हो चुका है और अनेक को पेंशन या अन्य लाभ मिलने आरम्भ हो गये हैं। इन परिवारों के बहुत से बच्चे छात्रवृति प्राप्त कर रहे हैं। मजदूर चाहते हैं कि उन्हें जो लाभ पहले से मिल रहे हैं, उनमें कोई रुकावट न आये।

श्रम विभाग, भवन एवं अन्य सनिर्माण श्रमिक कल्याण मण्डल राजस्थान द्वारा 01 जनवरी, 2016 से लागू नवीन योजनाएँ निम्नानुसार हैं -

1. भामाशाह निर्माण श्रमिक कल्याण योजना

निर्माण श्रमिकों तथा उनके आश्रितों की शिक्षा तथा कौशल विकास, सुलभ्य आवास, स्वास्थ्य बीमा तथा जीवन तथा भविष्य सुरक्षा की बहुआयामी योजना -

1. निर्माण श्रमिक शिक्षा तथा कौशल विकास योजना

हिताधिकारियों के बच्चों की सामान्य तथा प्रोफेशनल शिक्षा, कौशल विकास और मेधावी छात्र/छात्राओं की छात्रवृत्ति/प्रोत्साहन राशि में आठ गुना तक बढ़ोतरी करने की एकीकृत योजना -

छात्रवृत्ति	कक्षा 6 से 8		कक्षा 9 से 12		आईटीआई		डिप्लोमा (पॉलि., इंजी. या अन्य डिप्लोमा		स्नातक (सामान्य)		स्नातक (प्रोफेशनल कोर्स*)		स्नातकोत्तर (सामान्य)		स्नातकोत्तर (प्रोफेशनल कोर्स*)	
	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन	छात्र	छात्रा/विशेष योग्य जन
पहले	1000	1500	2000	2400	5000	7000	2000	3000	3000	4000	3000	4000	6000	8000	6000	8000
अब	8000	9000	9000	10000	9000	10000	10000	11000	13000	15000	18000	20000	15000	17000	23000	25000

मेधावी छात्र/छात्राओं को नकद पुरस्कार	कक्षा 8-10	कक्षा 11-12	डिप्लोमा (पॉलि., इंजी. या अन्य डिप्लोमा	स्नातक (सामान्य)	स्नातकोत्तर (सामान्य)	स्नातक (प्रोफेशनल कोर्स*)	स्नातकोत्तर (प्रोफेशनल कोर्स*)
पहले	2000	3000	7000	5000	10000	20000	30000
अब	4000	6000	10000	8000	12000	25000	35000

प्रोफेशनल कोर्स से आशय चिकित्सा यान्त्रिकी, एमबीए, एमटेक, एमएस आदि कोर्स से है।

विशेष - योजना का लाभ वर्ष 2014-15 के शैक्षणिक वर्ष की परीक्षा से देय। विद्यमान योजना मे छात्रवृति प्राप्त कर चुके छात्र/छात्राओं के अन्तर राशि देय होगी।

2. निर्माण श्रमिक सुलभ्य आवास योजना

हिताधिकारियों को हाउसिंग फॉर ऑल (अर्बन) योजना, अफोर्डेबल हाउसिंग योजना, मुख्यमन्त्री जन आवास योजना या केन्द्र/राज्य सरकार की अन्य आवास योजना में, पात्रतानुसार आवास प्राप्त करने के लिए तथा स्वयं का आवास निर्माण करने के लिए मण्डल द्वारा अधिकतम 1.50 लाख रुपये तक अनुदान।

3. निर्माण श्रमिक स्वास्थ्य बीमा योजना

पंजीकृत हिताधिकारियों तथा उनके परिवार के सदस्यों को राज्य सरकार की भामाशाह स्वास्थ्य बीमा योजना से लाभान्वित करने के लिये पूरी प्रीमियम राशि का भुगतान

मण्डल द्वारा। योजना की सूची में सम्मिलित अस्पतालों में सामान्य बीमारियों हेतु रुपये 30,000 तक और गम्भीर बीमारियों में 3 लाख रुपये तक के नि:शुल्क इलाज की सुविधा।

4. निर्माण श्रमिक जीवन तथा भविष्य सुरक्षा योजना

हिताधिकारियों के लिए प्रधानमन्त्री सुरक्षा बीमा योजना, प्रधानमन्त्री जीवन ज्योति बीमा योजना, अटल पेंशन योजना तथा आम आदमी बीमा योजना को मण्डल द्वारा न्यूनतम 50 प्रतिशत से शत-प्रतिशत तक अंशदान देकर, लागू करना।

योजना का नाम	वार्षिक अंशदान/प्रिमियम (रु.)	मण्डल द्वारा देय अशंदान/प्रीमियम(रु.)
प्रधानमन्त्री सुरक्षा बीमा योजना	12.00	12.000
प्रधानमन्त्री जीवन ज्योति बीमा योजना	330.00	165.00
अटल पेंशन योजना	504 से 3,492 से (आयु के अनुसार 1000/-पेंशन के लिए अशंदान)	252 से 1,746 रु.
आम आदमी बीमा योजना	100.00	100.00

2. शुभशक्ति योजना

महिला हिताधिकारियों तथा हिताधिकारियों की अविवाहिता बेटियों को उद्यमिता से सशक्त तथा उद्यमी बनाने तथा विवाह हेतु रुपये 55,000 प्रोत्साहन/सहायता राशि देने की योजना।

- प्रोत्साहन राशि का भुगतान अविवाहिता तथा बालिग बेटी/महिला हिताधिकारी के नाम से बैंक खाते में जमा द्वारा।
- प्रोत्साहन राशि का उपयोग महिला हिताधिकारी/बेटी के विवेक अनुसार आगे शिक्षा या व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करने, स्वयं का व्यवसाय या सूक्ष्म उद्योग प्रारम्भ करने, कौशल विकास करने आदि में तथा स्वयं के विवाह हेतु किया जा सकेगा।
- स्वयं का सूक्ष्म उद्योग या व्यवसाय प्रारम्भ करने में परामर्श हेतु एक मार्गदर्शक पुस्तिका दी जाएगी, जिसमें लघु पूंजी से उद्यम द्वारा सफल हुई महिलाओं की प्रेरक कहानियाँ तथा कौशल विकास की विभिन्न सम्भावनाओं की जानकारी भी होगी।
- पात्रता के लिए बेटी का 8वीं कक्षा उत्तीर्ण होना और हिताधिकारी का स्वयं का आवास होने पर घर में शौचालय होना आवश्यक।
- पुरानी विवाह सहायता योजना के लम्बित आवेदनों का निस्तारण उसी योजना के प्रावधानुसार किया जाएगा।

5. हिताधिकारी निर्माण श्रमिक की मृत्यु होने या घायल होने पर मण्डल द्वारा निम्न सहायता दी जाती है -

दुर्घटना में मृत्यु होने पर	5 लाख
दुर्घटना में स्थायी पूर्ण अपंगता होने पर	3 लाख रुपये
दुर्घटना में स्थायी आंशिका अपंगता होने पर	1 लाख रुपये
सामान्य मृत्यु होने पर	2 लाख रुपये (विशेष-सहायता राशि 75 हजार से बढ़ाकर 2 लाख रुपये की गयी है)
घायल होने पर	20 हजार रुपये तक

इसके अलावा मण्डल द्वारा सभी हिताधिकारियों का 'आम आदमी बीमा योजना' में समूह बीमा कराया जाता है। इस योजना में हिताधिकारी की सामान्य या दुर्घटना में मृत्यु होने या स्थायी अपंगता होने पर रुपये 30 हजार से रुपये 75 हजार तक अतिरिक्त बीमा लाभ जीवन बीमा निगम द्वारा देय है।

6. प्रसूति सहायता योजना

इस योजना के अन्तर्गत पंजीकृत महिला निर्माण श्रमिकों/हिताधिकारियों को प्रसूति सहायता दी जाती है। सहायता राशि को बढ़ाकर पुत्री का जन्म होने पर रुपये 21 हजार तथा पुत्र का जन्म होने पर रुपये 20 हजार किया गया है।

7. सिलिकोसिस पीड़ित हिताधिकारियों हेतु सहायता

पंजीकृत निर्माण श्रमिकों के सिलिकोसिस बीमारी से पीड़ित होने पर रुपये 1 लाख तथा मृत्यु होने पर रुपये 3 लाख की सहायता मण्डल द्वारा दी जाती है।

8. तीन वर्ष से पंजीकृत निर्माण श्रमिकों द्वारा अपने कार्य से संबंधित औजार/टूलकिट खरीदने पर रुपये 2 हजार का पुनर्भरण मण्डल द्वारा करने की योजना लागू की जा रही है। इस योजना में पात्र हिताधिकारियों को औजार खरीदने पर रुपये 2 हजार तक की राशि मण्डल द्वारा दी जाएगी।

- सभी विकास अधिकारियों को मण्डल की योजनाओं के आवेदन स्वीकृत करने के लिए अधिकृत किया गया है। अत: सभी पंजीकृत हिताधिकारी/निर्माण श्रमिक विकास अधिकारी कार्यालय में आवेदन प्रस्तुत कर मण्डल की योजनाओं का लाभ उठाएँ।
- कोई भी निर्माण श्रमिक जिसकी आयु 18 से 60 वर्ष के मध्य हो और जिसने पिछले एक वर्ष में कम से कम 90 दिन किसी भी निर्माण कार्य पर, जिसमें नरेगा के निर्माण कार्य भी सम्मिलित हैं, निर्माण श्रमिक के रूप में कार्य किया हो, वह हिताधिकारी के रूप में अपना पंजीयन करा सकते हैं। निर्माण श्रमिक होने का

प्रमाण-पत्र निर्माण कार्य के नियोजक द्वारा या ठेकेदार द्वारा या पंचायत प्रसार अधिकारी द्वारा या निर्माण श्रमिक यूनियन के पदाधिकारी द्वारा या श्रम निरीक्षक द्वारा दिया जा सकता है। पंजीयन के लिए सभी विकास अधिकारी और पंचायत सचिव/ग्राम सेवक अधिकृत हैं। इसके अलावा सभी ई-मित्र केन्द्रों पर ऑनलाइन हिताधिकारी पंजीयन सुविधा भी उपलब्ध है। अत: पात्र निर्माण श्रमिक रुपये 25 पंजीयन शुल्क और पाँच वर्ष के लिए एकमुश्त रुपये 60 अंशदान राशि जमा करा कर पंजीयन कराएँ और मण्डल की योजनाओं का लाभ उठाएँ।

- महानरेगा योजना में एक वर्ष में 100 दिन कार्य करने वाले परिवारों के कौशल विकास के लिये भारत सरकार द्वारा 'प्रोजेक्ट लाइफ - महात्मा गाँधी नरेगा' प्रारम्भ की गयी है। इस योजना के अन्तर्गत 86 हजार आशार्थियों का चयन ग्रामीण विकास विभाग, राजस्थान सरकार द्वारा किया जा चुका है, जिनके कौशल प्रशिक्षण का आयोजन राजस्थान कौशल एवं आजीविका विकास निगम द्वारा किया जायेगा। सभी चयनित आशार्थी इस प्रोजेक्ट में कौशल प्रशिक्षण प्राप्त कर अपनी आजीविका के अवसरों को बढ़ा सकेंगे।
- साथ ही, पंजीकृत निर्माण श्रमिकों के परिवार के युवा अपनी रुचि के व्यवसायों में रोजगारपरक कौशल प्रशिक्षण प्राप्त कर अपनी आजीविका को और सँवार सकते हैं।
- प्रधानमन्त्री श्रम योगी मानदेय योजना असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के लिए 18 साल के बाद रुपये 55 प्रति माह जमा कराने पर 60 साल की आयु के पश्चात् पेंशन मिलने का प्रावधान है।

इन सबके बावजूद श्रमिकों के कल्याण की दिशा में अभी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। विशेष तौर पर असंगठित क्षेत्र के मजदूरों के लिए अभी अनेक कार्य करने हैं। उनकी जीवन-दशा में सुधार की प्रकिया तेज की जानी चाहिए। ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि उन्हें बारहों महिने पर्याप्त काम मिले। राष्ट्र की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले को प्रगति के लाभों से वंचित नहीं किया जाना चाहिए।

निर्माण मजदूर के कानूनों की राष्ट्रीय समिति का कहना है कि जो नयी व्यवस्था लायी जा रही है उसमें कई समस्याएँ हैं और उससे कहीं बेहतर व्यवस्था 1996 के दो कानूनों में है इसलिये निर्माण मजदूरों के हक के लिए जरूरी है कि पहले से चल रही व्यवस्था बनी रहनी चाहिए।

बेरोजगारी की स्थिति वह होती है जब कोई श्रमिक प्रचलित मजदूरी या उससे कम पर कार्य करने हेतु तत्पर हो परन्तु उसे कार्य करने का अवसर नहीं मिल पा रहा हो। भारत एक अल्पविकसित, किन्तु विकासशील देश है। अत: यहाँ बेरोजगारी का स्वरूप औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों की अपेक्षा भिन्न है। ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की आय का मुख्य स्रोत कृषि है परन्तु कृषि मौसमी व्यवसाय है। अल्परोजगार के अन्तर्गत श्रमिक बाहर से तो कार्य पर लगे

प्रतीत होते हैं किन्तु वास्तव में उन श्रमिकों की उस कार्य में आवश्यकता नहीं होती। इन श्रमिकों की सीमान्त उत्पादकता शून्य अथवा नगण्य होती है। कृषि में इस प्रकार की अदृश्य बेरोजगारी की प्रधानता है (कार्यालय सम्भागीय संयुक्त श्रम आयुक्त विभाग)।

सम्पूर्ण राष्ट्र और समाज को राष्ट्र और समाज की प्रगति, समृद्धि तथा खुशहाली में दिये श्रमिकों के योगदान में नमन करना चाहिये। देश के उत्पादन में वृद्धि और अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जो उच्च मानक हासिल किये गये हैं वह हमारे श्रमिकों के अथक प्रयासों का ही नतीजा है इसलिये राष्ट्र की प्रगति में अपने श्रमिकों की महत्वपूर्ण भूमिका को पहचान कर सभी देशवासियों को उसकी सराहना करना चाहिए। इसके साथ ही मजदूर दिवस के अवसर पर देश के विकास और निर्माण में बहुमूल्य भूमिका निभाने वाले लाखों मजदूरों के कठिन परिश्रम, दृढ़ निश्चय और निष्ठा का सम्मान करना चाहिए तथा मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए सम्पूर्ण राष्ट्र और समाज को सदैव तत्पर रहना चाहिए।

सन्दर्भ सूची

पॉकेट बुक ऑफ लेबर स्टैटिस्टिक्स 2001-2002, लेबर ब्यूरो, शिमला।

भवन एवं अन्य निर्माण कर्मकार कल्याण सेल्स अधिनियम, 1996।

महतो डी.एन (1999), *समाज कल्याण,* नई दिल्ली, मई।

द इंडियन जर्नल ऑफ लेबर (2005) वॉ. 48 नं. 2।

यादव रवि प्रकाश, दीप रागिनी, राय पूजा, *भारत में महिला श्रमिक,* एटलांटि पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, (2005)।

राष्ट्रीय श्रम आयोग (2002) वा. 1, पार्ट-2।

वी.वी. गिरि नेशनल लेबर इंस्टीट्यूट (2000), *टूल्स फॉर कन्वर्सेशन: ए नेशनल पर्सपेक्टिस।*

विक्टोरिया, गोडार्ड एण्ड बेन डॉमिन हाइट (1982), *आई,एल.ओ. पत्रिका,* जनेवा।

श्रम की दुनिया (2003), *आई.एल.ओ. पत्रिका,* जनेवा, अंक 18।

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 57-62)

सामाजिक चेतना में सन्त साहित्य की भूमिका

अर्चना मेहता*

समाज की जिन परिस्थितियों में सन्तों का पोषण हुआ तथा जिन परिस्थितियों और धार्मिक रूढ़ियों-अन्धविश्वासों का सन्तों को सामना करना पड़ा है, वे एक ओर सन्तों के व्यक्तित्व को सबल बनाने में सहायक हुईं तो दूसरी ओर सन्तों ने उन परिस्थितियों को बदलने का भरसक प्रयास किया। उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा अपने सामाजिक विचारों को निर्भीकता से व्यक्त किया। सन्तों की सामाजिक चेतना में जो मूल तत्व है, वह स्वयं के प्रति, मानव मात्र के प्रति और सम्पूर्ण विश्व के प्रति दायित्व को व्यंजित करता है। कर्मयोग की परम्परा का निर्वाह करते हुए अपनी आध्यात्मिक साधना द्वारा समाज का जो परिष्कार किया, वही सन्तों की सामाजिक चेतना है।

समतामूलक समाज के लिए मनुष्यों में पारस्परिक सद्भावना, आचार-व्यवहार, संवेदना तथा मूल्यों का पालन अनिवार्य है, जिसके द्वारा मानव अच्छाई-बुराई, उचित-अनुचित आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त करता है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में ऐसी चेतना की अपेक्षा सन्त साहित्य में सामाजिक चेतना के लिए बाह्य आडम्बरों की अपेक्षा आन्तरिक भावनाएँ ज्यादा होनी चाहिए ताकि समाज में नव-जागरण की चेतना सुदृढ़ हो सके।

प्रकृति की गोद में मानव ही ऐसा प्राणी है जिसे ईश्वर ने भौतिक आवश्यकताओं की अनुभूति के साथ चेतना, विचार, चिन्तन तथा भावनाएँ प्रदान की हैं। इन्हीं अनुभवों और

* युवा लेखिका और पत्रकार, शाजापुर (म.प्र.) **E-mail: archanamehta01@gmail.com**

ज्ञान-धारणाओं की सहायता से वह समस्त मानव समाज को लेकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है। समाज में रहकर मानव पारस्परिक सद्भावना, आचार-व्यवहार आदि मानवीय मूल्यों का प्रयोग एवं पालन करता है। साहित्य उस आईने की तरह है जिसके समक्ष जाते ही प्रबुद्ध मानव तत्कालीन समाज की तस्वीर देख कर सामाजिक दिशा एवं दशा का अनुभव कर समाज में उचित परिवर्तन के लिए मार्गदर्शक का कार्य भी करता है। प्रत्येक युग का साहित्यकार भावना, चिन्तन और कल्पना के स्तर पर समाज की घटनाओं से अवश्य जुड़ा होता है। वह युग श्रेष्ठ बनकर समाज में व्याप्त समस्त विसंगतियों को दूर कर समाज को विकासोन्मुख बनाने की प्रेरणा देता है।

डॉ. जयनाथ नलिन के शब्दों में, "समाज और साहित्य में एक चेतनाचक्र निरन्तर चलता रहता है, इसलिये साहित्य और समाज दोनों ही इस चेतना तरंग द्वारा अखण्ड रूप से सम्बन्धित हैं। यह चेतनाचक्र निरन्तर घूमते हुए समाज से कुछ प्रतिक्रिया साथ लेकर साहित्य को प्रदान करता है और साहित्य से नयी चेतना प्रक्रिया ले कर समाज को प्रदान करता है। इस प्रक्रिया द्वारा साहित्य और समाज नवीन चेतना से प्राणान्वित, अलौकिक और उत्कर्षित होते रहते हैं।"[1]

सामाजिक चेतना के स्वरूप के अन्तर्गत चेतन, अर्द्धचेतन और अवचेतन तत्व आते हैं, जिनके द्वारा मनुष्य सोच-समझ कर उचित-अनुचित, अच्छाई-बुराई आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त करता है। चेतनमन से जो बातें सीखते हैं, अगर वे अर्द्धचेतन और अवचेतन मन के समानान्तर न हों, उनके साथ समन्वय न हो तो व्यक्ति का व्यक्तित्व खंडित हो जाता है। मनुष्य के चेतन मन को जो सिखाया जाता है, उसमें पूरे व्यक्तित्व का कोई ध्यान नही जाता है। चेतन मन पर नैतिकता, सत्य, अहिंसा, सभ्यता के खोखले आदर्श तो आरोपित किये जा सकते हैं, लेकिन अन्दर ही अन्दर गन्दगी एकत्रित होती रहती है। इस प्रकार मानव मन में द्वन्द्व चलता रहता है और अधिकतर लोग इसमें जी कर समाप्त हो जाते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण संस्कृति, शिक्षा और समाज मनुष्य की इस अन्तर्द्वन्द्व व्यवस्था पर खड़ा है। एक साहित्यकार चेतनाविहीन सृजन नहीं कर सकता है। वह समाज में व्याप्त रूढ़ियों, अन्धविश्वासों, कुप्रथाओं, विषमताओं, मानसिक विकृतियों को अपनी रचनाओं में चेतना के माध्यम से दूर करते हुए जन-जन में चेतना का प्रवाह कर विसंगतियों से बचने के लिए प्रेरणा प्रदान करता है।

"सामाजिक चेतना सरिता प्रवाह की तरह विकसित होती चलती है, यह चेतना विच्छिन्न नहीं होती बल्कि भिन्न-भिन्न व्यक्तियों से जुड़ती चली जाती है। विभिन्न सामाजिक समस्याओं, राजनीतिक गतिविधियों तथा धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विषमताओं से सम्बन्धित नागरिक जीवन की समानतामूलक विकासात्मक भावना ही सामाजिक चेतना है।"[2]

मानव पीड़ा की अभिव्यक्ति, सामाजिक विसंगतियाँ, पूंजीपतियों के प्रति घृणा भाव, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद, अनैतिकता की पराकाष्ठा, खोखले आदर्श और सिद्धान्तों के प्रति आक्रोश, मानवीयता के प्रति आत्मीयता और मनुष्य के प्रति समभाव आदि सामाजिक चेतना

के मापदण्ड हैं। आज कम्प्यूटर युग में यान्त्रिकी एवं तकनीकी विकास और औद्योगिकीकरण की दौड़ में मानव स्वयं को हीन और भयभीत अनुभव करने लगा है। वह अपने निजी स्वार्थ के लिए समाज द्वारा प्रचलित परम्पराओं को तोड़ कर विरोध प्रकट करता है। इस प्रकार की संकीर्ण एवं विकृत विचारधारा प्रत्येक मानव को एक-दूसरे से अलग करती है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के भक्ति काल को स्वर्ण युग कहा जाता है। भक्ति काल को सार्थक बनाने में सन्तों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सन्तों ने मिथ्याडम्बरों तथा परम्परागत रूढ़ियों को अपनी वाणी द्वारा तोड़ने का प्रयास कर समाज को नयी दिशा, नया विश्वास तथा नयी चेतना देने का प्रयास किया। उन्होंने मानव समाज को संकीर्ण मान्यताओं से बाहर निकल कर ऐसा नवीन स्वरूप देने का प्रयास किया, जिससे मानव-मानव में प्रेम की वृद्धि हो। मानव संस्कृति का मानसरोवर भारतीय संस्कृति है। हिन्दी साहित्य में सन्त साहित्य का सृजन परम्पराओं से सम्बद्ध है। भारतीय संस्कृति के मौलिक अवदान स्वरूप गुरु-शिष्य परम्परा, योगसाधना के प्रति निष्ठा, कर्मकाण्ड का व्यवहारिक बोध और आध्यात्मिकता का अविर्भाव हुआ।

आज के भौतिक युग में काम, क्रोध, लोभ आदि तामसिक गुणों का सर्वत्र प्राबल्य परिलक्षित हो रहा है और सात्विक गुणों जैसे प्रेम, सत्य, अहिंसा आदि का तीव्र गति से क्षरण हो रहा है। भौतिक सुखों की मृगमरीचिका के पीछे दौड़ने के कारण मानव मानसिक शान्ति खोता जा रहा है। पाश्विक शक्तियों का ताण्डव चारों दिशाओं में दिखाई दे रहा है। पूरे विश्व में इतने परमाणु बम हैं कि पृथ्वी अनेकों बार नष्ट हो सकती है। ऐसे अशान्त वातावरण में भय से आक्रान्त मानवता की रक्षा का एकमात्र उपाय सन्तों की वाणी का निरन्तर अनुशीलन है। सन्तों की वाणी का अनुसरण करने वाले मानव आत्मिक सन्तुष्टि प्राप्त कर सकते हैं। भौतिकता के रास्ते पर चलने वाले मानव को आत्मिक शान्ति तब तक नहीं मिलेगी जब तक कि वह आध्यात्मिकता का आश्रय ग्रहण नहीं करेगा।

सन्त दादू एक स्वर से उदघोषणा करते हैं -

सत्य राम, आत्मा वैष्णो, सुबुद्धि भूमि, सन्तोष स्थान,
मूल मन्त्र, मन माला, गुरु तिलक, सत्य संयम,
शील शुच्चा, ध्यान धोती, काया कलश, प्रेम जल,
मनसा मन्दिर, निरंजन देव, आत्मा पाती, पुहुप प्रीति,
चेतना चन्दन, नवधा नाम, भाव पूजा, मति पात्र,
सहज समर्पण, शब्दघटा, आनन्द आरती, दया प्रसाद,
अनन्य एक दशा, तीर्थ सत्संग, दान उपदेश, व्रत स्मरण,
षट् गुण ज्ञान, अजपा जाप, अनुभव आचार,
मर्यादा, राम फलदर्शन, अभि अन्तर, सदानिरन्तर,
सत्य सौंज दादू वर्तते, आत्मा उपदेश, अन्तरगत पूजा[3]

सन्त समन्वयवादी थे, समाज सुधारक थे। सन्त मन, हृदय, अहंकार की बुद्धि के स्तरों को पार कर उनकी ज्ञानानुभूति मन वाणी से अगोचर है। भारतीय सन्तों ने विकट समय में जन्म लेकर आम प्रजा को सम्बल प्रदान किया है, जिनमें सन्त रविदास प्रमुख स्थान रखते हैं। "सन्त रैदास ने तत्कालीन युग में प्रचलित सम्पूर्ण साधना पद्धतियों एवं विचारों का समन्वय करते हुए नवयुग के अनुरूप एक ऐसी सर्वांगीण पद्धति दी, जिसमें प्रत्येक विचारधारा का लाभकारी स्वरूप समाविष्ट था। तत्कालीन परिवेश में रैदास की विचारधारा ने सामाजिक पुनर्व्यवस्थापन के उस युग में एकमात्र अस्त्र धार्मिक चिन्तन को समन्वित एवं सरलतम रूप में प्रस्तुत करने के कार्य को बहुत आगे बढ़ाया।[4]

सन्तमत की सामाजिक भूमिका के सन्दर्भ में डॉ. मनमोहन सहगल लिखते हैं, "सन्तों के द्वारा मानव को मानव रूप में देखने एवं जातिवाद की उपेक्षा ने भी समाज के रिसते घावों पर अनुलेपवत् कार्य किया। पतनोन्मुखी स्थिति के कारण जनमानस की डोलती नैया को सन्तों ने मँझधार में डूबने से बचा लिया। समाज जिस शक्ति की अपेक्षा रखता था, वही वरदान उन्होंने प्रदान किया। समाज के नव विधान ने वर्ण व्यवस्था के विकृत रूप से पीड़ित निम्न जातियों को सम्मानयुक्त आशा का संकेत भी दिया।"[5]

सन्तों के सितारों से भरे आकाश में असंख्य सितारे हैं, लेकिन सब सितारों में सभी सन्त ध्रुवतारे के समान हैं। वर्तमान काल में सन्तों के उपदेशों की बड़ी आवश्यकता है। युद्धप्रियता, आतंकवाद, भ्रष्टाचार, कूट राजनीति, धर्मान्धता, व्यापार आदि ने मनुष्य जाति पर अधिपत्य जमा रखा है। विज्ञान के ध्वंसकारी प्रयोगों की अपेक्षा सन्तों की वाणी मनुष्य के हृदय को प्रभावित कर सकती है। सन्तों के अनुसार सृष्टि के सृजन-संहरण के कारणभूत त्रिदेव को भी दु:ख के दावानल में जलते ही पाया है।

सन्त कबीर ने कहा है -

उदै अस्त की बात कहत हौ सब का किया विवेका हो।
घाट-बाटै सब जग दुखिया क्या गिरही वैरागी हो।
सुकदेव अचारज दु:ख कै कारनि गर भसौ माया त्यागी हो।
जोगी दुखिया जंगम दुखिया तपसी कौ दुख दूना हो।
आसा-त्रिसना सब को व्यापै कोई महल न सूना हो।
साँच कहो तो कोई न मानै झठ कहा नहि जाई हो।
ब्रह्मा-विष्णु-महेसर दुखिया जिन यह राह चलाई हो।
कहे कबीर सकल जग दुखिया सन्त सुखी मन जीती हो।[6]

भक्तिकाल में चेतना को व्यक्तिगत चेतना के स्थान पर सामाजिक स्तर पर पहचान मिली। इस काल में अध्यात्मवाद के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। कबीर, रैदास, मीराबाई, दादूदयाल, पलटूदास, सुन्दरदास, रज्जबदास आदि सन्तों ने जिस चेतना का प्रसार किया वह मानवीय चेतना सर्वव्यापक चेतना का अंश है। सामाजिक चेतना किसी समाज के सामूहिक अवचेतन द्वारा संचालित वह चेतना है, जो तत्कालीन युग बोध, समाज की दशा, नित्य प्रति

का जीवन, जीवन विधियाँ तथा क्रूर सामाजिक ढाँचे के साथ चलते हुए टूटकर और जुड़कर मनुष्य के इतिहास से सबक लेकर वर्तमान में मानवीय सम्भावनाओं के बहुमुखी तथा बहुआयामी विकास को प्रस्तुत करते हुए सदैव ही भविष्यमय स्वरों का आलाप करती है।[7] मनुष्य सामाजिक परिस्थितियों पर निर्भर है, इसलिये सामाजिक चेतना के वातावरण का उत्तम बना रहना आवश्यक है। सन्तों के उपदेश सामाजिकों के लिए ज्वलन्त उपदेश हैं, जिन्हें पा कर मानव चेतना जाग्रत हो उठती है। चेतना के सन्दर्भ में सन्त कबीर ने कहा है -

चेतु रे चेतु नर कहाँ भटकत फिरे,
आप सँभारि चित चेतु प्यारे।
दूसर कौन है कहाँ ढूँढत फिरै
देखु सँभरि सोवै कहा रै।[8]

मध्य युग में साहित्यकार और उपदेशक मानवीय नियति से अपना लगाव और उसके प्रति अपने विचार व्यक्त करने हेतु जो माध्यम प्रयोग में लाते थे, वे उतने ही सार्थक थे, जितने आम प्रजा तक पहुँचाने के लिए अपने दायित्व के प्रति समर्पण भाव से समाज को नयी दिशा देते थे। आज साहित्यकारों को मानवीय नियति से सम्बद्ध अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करने और जनता में चेतना का संचार करने में कठिनाई होती है। भारत की स्वतन्त्रता तब तक सार्थक नहीं है, जब तक सामान्य जन स्वतन्त्र नहीं है।

सामान्य जन के स्वतन्त्र होने का अर्थ यह नहीं है कि उसे भरपेट भोजन और जरूरत के मुताबिक कपड़ा मिल जाये। उसके मानस में जो अन्ध रूढ़ियाँ, कुण्ठाएँ, अविवेक, मूर्च्छना, मत, परम्पराएँ आदि प्रवृतियाँ हैं, जिनके कारण वह युग-युग से दास बनता चला आया है, उनसे भी उसे मुक्त कराना है।[9] इस दृष्टि से चेतना न केवल एक बाह्य परिस्थिति है, वरन् एक आन्तरिक चेतना भी है। जब साहित्यकार सामान्य जन चेतना के दायित्व का निर्वहन करता है तो वह सम्पूर्ण मानवीय यथार्थ की पृष्ठभूमि ग्रहण करता है। आज आलोचना करते हुए सुनते हैं कि मानव चेतना मरणोन्मुख एवं पतनोन्मुख है। क्या कोई भूकम्प, जल प्रलय, महामारी या बौद्धिकता इस चेतना को नष्ट कर रही है? यथार्थ के धरातल पर मानव में, समाज में आन्तरिक रुग्णता आ गई है। रुग्णता से मुक्त होने के लिए सन्त साहित्य का अध्ययन कर इसे आत्मसात करना है। जिस प्रकार शरीर में रक्त प्रवाह रुकने से अंग पक्षाघात से बेकाम हो जाता है, उसी प्रकार भौतिकवादी युग में मानव संस्कृति और चेतना पूरे विश्व में मूल्यहीनता के इस पक्षाघात से अशक्त होकर प्रगति और विकास की दिशाओं में भटक रहे हैं। मानव सन्तुष्टि में सब कुछ नहीं है, सन्तोष सचेत होना चाहिए।

सन्त रज्जब दास लिखते हैं -

सन्तो, मगन भया मन मेरा
अहनिस सदा एकरस लाग्या, दिया दरीबै डेरा।
कुल मरजाद मैड सब लागो, बैठा भाटी नेरा।
जात-पात कछु समुझौ नाहीं, किस कूकरै परेरा।

रस की प्यास आस नहिं औरां, इहिमत किया बसेरा।
ल्याव ल्याव ऐही लय लागी, पीवै फूल घनेरा।
सो रस माग्या मिले न काहू, सिर पाटे बहुतेरा।
जन रज्जब तनमन दे लीया, होई धनी का चेरा।[10]

समाज की जिन परिस्थितियों में सन्तों का पोषण हुआ तथा जिन परिस्थितियों और धार्मिक रूढ़ियों-अन्धविश्वासों का इन सन्तों को सामना करना पड़ा है, वे एक ओर इन सन्तों के व्यक्तित्व को सबल बनाने में सहायक हुईं, दूसरी ओर इन सन्तों ने उन परिस्थितियों को बदलने का भरसक प्रयास किया। उन्होंने अपनी वाणी में अपने सामाजिक विचारों को निर्भीकता से व्यक्त किया। सन्तों की सामाजिक चेतना में जो मूल तत्व है, वह स्वयं के प्रति, मानव मात्र के प्रति और सम्पूर्ण विश्व के प्रति दायित्व को व्यंजित करता है। कर्मयोग की परम्परा का निर्वाह करते हुए अपनी आध्यात्मिक साधना द्वारा समाज का जो परिष्कार किया है, वही सन्तों की सामाजिक चेतना है। आज भी समाज में समाजिक चेतना के मार्ग पर चलने वाले काफी संख्या में हैं, लेकिन निजी स्वार्थ के कारण वे गंगा और यमुना के संगम में लुप्त सरस्वती की तरह जीवन जी रहे हैं। आज सवा सौ करोड़ आबादी वाले देश में नयी पीढ़ी के सामने कोई आदर्श दिखायी नहीं देता है। ऐसे में आज भी सामाजिक चेतना के लिए सन्त साहित्य का अध्ययन एवं अनुशीलन आधुनिक परिप्रेक्ष्य में तभी प्रासंगिक है, जब मनुष्य के सिद्धान्त और व्यवहार, कथनी और करनी में अन्तर न हो। वर्तमान युग में सन्तों के काव्य का समतापरक मानवतावादी स्वर समाज को एक सुख की राह दिखाता है तथा समाज में नव जागरण की चेतना को सुदृढ़ कर सकता है।

सन्दर्भ

1. नलिन, जयनाथ (1976) *साहित्य का आधार दर्शन,* आलोक प्रकाशन, भिवानी।
2. सिंह, कुंवरपाल (1977) *हिन्दी उपन्यासों में भी सामाजिक चेतना,* पाण्डुलिपि प्रकाशन, दिल्ली।
3. वंशी, बलदेव (सम्पा.) (2010) *दादू ग्रंथावली,* प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली।
4. शर्मा, सन्तोष कुमार (सम्पा.) *सौम्य सन्त : गुरु रविदास।*
5. सहगल, मनमोहन (1977) *गुरु ग्रन्थ साहिब: सांस्कतिक सर्वेक्षण,* पटियाला, भाषा विभाग पंजाब।
6. युगेश्वर (1998) *कबीर समग्र, भाग-1,* हिन्दी प्रचारक प्रकाशन, वाराणसी, 1998,
7. जिन्दल, राजिन्द्र पाल (2009) *सामाजिक चेतना तथा बच्चन काव्य,* यूनिस्टार प्रकाशन, चण्डीगढ़।
8. युगेश्वर (1998) *कबीर समग्र, भाग-2,* हिन्दी प्रचारक प्रकाशन, वाराणसी।
9. भारती, धर्मवीर (1990) *मानव मूल्य और साहित्य,* भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली।
10. *रज्जब की वाणी* (2009) वेलीवीडियर प्रिटिंग वर्क्स, इलाहाबाद।

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 63-71)

ग्रामीण क्षेत्र में आवास की स्थिति एवं समस्याएँ : धार जिले में प्रधानमन्त्री आवास योजना ग्रामीण के विशेष सन्दर्भ में

ममता पंवार*

भारत की 68.84 प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है और लगभग अधिकांश ग्रामीण जनसंख्या अपर्याप्त एवं कच्चे मकानों में निवास करती है। गाँव के अधिकतर लोगों की आय का साधन खेती होता है जिससे उनका केवल घर खर्च ही निकलता है। पैसों की कमीं के कारण ऐसे लोग घर की मरम्मत का खर्च उठाने में भी असमर्थ होते हैं, फलस्वरूप उनके घरों की हालत और जर्जर होती जाती है। 1985 में इन्दिरा आवास योजना का क्रियान्वयन किया गया जिसका उद्देश्य गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की मकान सम्बन्धी जरूरतों को पूरा करना था। इस योजना को वर्ष 2016 से प्रधानमन्त्री आवास योजना ग्रामीण के रूप में पुनर्गठित किया गया। प्रस्तुत शोध पत्र में प्रधानमन्त्री आवास योजना के अन्तर्गत निर्मित आवासों की स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर इससे सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन किया गया है।

रोटी, कपड़ा और मकान प्रत्येक मनुष्य की आवश्यकता होती है। ग्रामीण अथवा शहरी क्षेत्र का व्यक्ति रोटी तथा कपड़ा तो आसानी से प्राप्त कर लेता है, किन्तु मकान प्राप्त

*सहायक प्राध्यापक, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
E-mail: mamtapanwar9@gmail.com

करना आसान नहीं होता है। जहाँ तक आवास के सन्दर्भ में बात की जाये तो भारत की 68.84 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है तथा अधिकांश ग्रामीण जनसंख्या असन्तोषजनक कच्चे मकानों में निवास करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में आवास एक गम्भीर समस्या है। यद्यपि यहाँ लोग शहरों की तरह सड़कों पर रहने के लिए मजबूर नहीं हैं (हिरवे, 1987)। ग्रामीणों की जीविकोपार्जन का साधन खेती है जिससे केवल उनका खान-पान का व्यय ही सम्भव होता है। कम आय के कारण ग्रामीण स्वयं के जर्जर मकानों की मरम्मत करवाने की स्थिति में भी नहीं होते हैं जिसका नतीजा घरों का गिरना और लोगों की मौत होता है। ऐसी घटनाओं का शिकार कई लोग हो चुके हैं। ऐसी घटनाओं को ध्यान में रखते हुए स्वतन्त्रता के बाद वर्ष 1960 में एक सार्वजनिक आवास कार्यक्रम शुरू कर पाँच लाख परिवारों को मकान उपलब्ध कराये गये। वर्ष 1957 में एक ग्रामीण आवास कार्यक्रम सामुदायिक विकास आन्दोलन के भाग में प्रारम्भ किया गया जिसमें प्रति आवास रु. 5,000 तक का ऋण प्रदान किया गया। वर्ष 1974 से 1979 के अन्त में 67 हजार आवास इसके अन्तर्गत निर्मित किये गये। आवास निर्माण के लिए जमीन निर्माण सहायता योजना चौथी पंचवर्षीय योजना में भी प्रारम्भ की गयी।

वास्तव में ग्रामीण आवास का उदय राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (एनआरईपी) 1980 और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम (आरएलपीजीपी) 1983 के मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों से हुई थी। वर्ष 1985 में आरएलपीजीपी की उप-योजना से इन्दिरा आवास योजना को एक स्वतन्त्र कार्यक्रम बना दिया गया। जिसका उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों की मकान सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करना था। इसके क्रियान्वयन के 30 वर्ष से अधिक का समय बीत जाने के पश्चात् ग्रामीण परिदृश्य में बेहतर आवास की माँग को ध्यान में रखते हुए तथा वर्ष 2022 तक सभी को मकान उपलब्ध कराने के लिए सरकार की वचनबद्धता को पूरा करने के लिए इन्दिरा आवास योजना को 1 अप्रैल 2016 से प्रधानमन्त्री आवास योजना (पीएमवाय) के रूप में पुनर्गठित किया गया है।

इस योजना का मुख्य ध्येय आर्थिक रूप से पिछड़े, गरीब और वंचित लोगों को आवास उपलब्ध करवाना है। यह योजना दो भागों - ग्रामीण तथा शहरी - में विभाजित है। शहरों के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में आवास की समस्या को दूर करने के लिए इस योजना का विस्तार गाँवों तक किया गया है। इस योजना में रुपये नौ लाख के ऋण पर चार प्रतिशत की छूट मिलती है और रुपये 12 लाख पर तीन प्रतिशत की। इससे ग्रामीण क्षेत्र में 33 प्रतिशत घरों की संख्या बढ़ी है। इस योजना के तहत मकान की मरम्मत के लिए भी रुपये दो लाख ऋण पर तीन प्रतिशत की छूट दी जाती है।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य प्रधानमन्त्री आवास योजना के अन्तर्गत निर्मित आवासों की स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर इसमें व्याप्त समस्याओं का अध्ययन करना है। शोध पत्र में द्वितीयक समंकों का संकलन शासकीय वेबसाइट से किया गया है। प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) के लाभार्थियों से चर्चा तथा अवलोकन द्वारा इस विषय पर गहराई से अध्ययन किया गया है।

भारत में प्रधानमन्त्री आवास योजना की स्थिति

भारत में प्रधानमन्त्री आवास योजना की स्थिति को तालिका 1 में दर्शाया गया है। तालिका से ज्ञात होता है कि प्रधानमन्त्री आवास योजना ग्रामीण के अन्तर्गत कुल लक्ष्य सम्पूर्ण भारत में 99,86,284 आवास निर्माण का रखा गया था जिसमें से 92,59,966 आवास स्वीकृत किये गये तथा 67,11,881 मकानों का निर्माण किया गया। भारत में लक्ष्य के अनुरूप 72 प्रतिशत कार्य योजना को पूर्ण कर लिया गया है। 80 प्रतिशत से अधिक कार्य भारत के हिमाचल प्रदेश (88.8 प्रतिशत), केरल (85 प्रतिशत), मध्यप्रदेश (87 प्रतिशत), सिक्किम (84.7 प्रतिशत) तथा पश्चिम बंगाल (81.9 प्रतिशत) में किया जा चुका है।

तालिका 1
भारत में प्रधानमन्त्री आवास योजना की स्थिति

क्र.	प्रदेश	लक्ष्य	निर्मित	स्वीकृत	प्रतिशत
1	अरुणाचल प्रदेश	9154	67	1071	6.2
2	असम	259810	128518	220670	58.2
3	बिहार	1176617	323124	928007	34.8
4	छत्तीसगढ़	788235	539535	784220	68.7
5	गोवा	761	0	90	0
6	गुजरात	204703	153567	199181	77
7	हरियाणा	21502	9263	20726	44.6
8	हिमाचल प्रदेश	7385	6104	6872	88.8
9	जम्मू कश्मीर	38772	10021	28951	34.6
10	झारखण्ड	528791	367354	526460	69.7
11	केरल	42431	14320	16846	85
12	मध्यप्रदेश	1399001	1221557	1396078	87.4
13	महाराष्ट्र	449820	284635	422204	67.4
14	मणिपुर	9740	4541	9711	46.7
15	मेघालय	20745	2192	19965	10.9
16	मिजोरम	6600	2070	3948	52.4
17	नागालैण्ड	8481	0	2928	0
18	उड़ीसा	992558	742895	990685	74.9
19	पंजाब	13990	7273	13955	52.1
20	राजस्थान	687091	511479	683983	74.7
21	सिक्किम	1095	925	1091	84.7
22	तमिलनाडु	327552	133961	291029	46
23	त्रिपुरा	24989	19717	24970	78.9
24	उत्तर प्रदेश	1282616	977062	1259799	77.5
25	उत्तराखण्ड	14082	9597	12496	76.8
26	पश्चिम बंगाल	1397474	1137732	1388395	81.9
27	अंडमान एवं निकोबार	210	0	0	0
28	दादरा और नागर हवेली	5718	132	5568	2.3

क्र.	प्रदेश	लक्ष्य	निर्मित	स्वीकृत	प्रतिशत
29	दमन एवं द्वीव	15	13	14	92.8
30	लक्षद्वीप	54	0	53	0
31	पण्डिचेरी	0	0	0	0
32	आन्ध्रप्रदेश'	120943	39033	0	0
33	कर्नाटक*	145349	65194	0	0
34	तेलंगाना	0	0	0	0
	कुल	9986284	6711881	9259966	72.4

स्रोत : ग्रामीण विकास मन्त्रालय, भारत सरकार। www.rhreporting.nic.in

*आन्ध्रप्रदेश तथा कर्नाटक राज्यों में क्रमश: लक्ष्य 1,20,943 तथा 1,45,349 निर्धारित किया गया था। इसके अनुसार दोनों राज्यों में निर्मित आवासों की संख्या 39,033 तथा 65,194 है, किन्तु यह आवास स्वीकृत नहीं किये गये हैं।

तालिका से स्पष्ट है कि भारत के कुछ राज्य ऐसे भी हैं जहाँ कार्य की प्रगति काफी धीमी है। इसमें अधिकांश उत्तर पूर्वी राज्यों के नाम आते हैं। मेघालय में 10.9 प्रतिशत, मणिपुर में 46.7 प्रतिशत, मिजोरम में 52.4 प्रतिशत तथा अरुणाचल प्रदेश में 6.2 प्रतिशत कार्य इस योजना के अन्तर्गत पूर्ण हो पाया है। गोवा, नागालैंड, अंडमान एवं निकोबार तथा लक्षद्वीप राज्यों में निर्धारित लक्ष्य के अनुरूप एक भी निर्माण कार्य नहीं किया गया क्योंकि इन राज्यों की अधिकांश भौगोलिक स्थिति पहाड़ी है तथा इन स्थानों पर मकान निर्माण के लिए उपयोग होने वाली सामग्री को पहुँचाने के लिए परिवहन की उपलब्धता सुगम नहीं है जिसके कारण लागत अधिक आती है और निर्माण कार्य की गति भी धीमी होती है। सम्पूर्ण भारत के राज्यों के आँकड़ों के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि इस योजना के अन्तर्गत 50 प्रतिशत से अधिक कार्य केवल 18 राज्यों में किया गया है। सम्पूर्ण रूप से देखा जाये तो ग्रामीण आवास हेतु शासकीय प्रयास बहुत अव्यवस्थित रहे। जो शासकीय प्रयास किये भी गये वो बिना किसी उचित आवासीय सर्वेक्षण के किये गये और न ही यह ध्यान दिया गया कि किस प्रकार के आवास की आवश्यकता है (हिरवे, 1987)।

चित्र 1

भारत में प्रधानमन्त्री आवास योजना की स्थिति

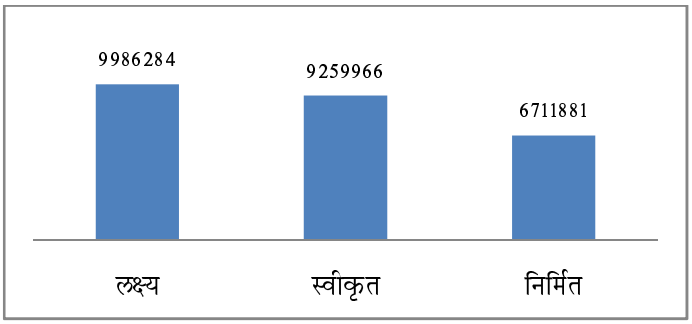

मध्यप्रदेश में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) की स्थिति

तालिका 2
मध्यप्रदेश में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) की स्थिति

क्र.	जिला	लक्ष्य	निर्मित	स्वीकृत	प्रतिशत
1	आगर मालवा	14763	12734	14756	86
2	अलीराजपुर	22242	18617	22226	84
3	अनुपपुर	25448	21969	25362	86.6
4	अशोक नगर	19158	16232	19125	84.8
5	बालाघाट	31546	26358	31475	83.7
6	बड़वानी	31458	26260	31377	83.6
7	बैतूल	21276	19889	21323	93.2
8	भिण्ड	5958	5526	5948	92.9
9	भोपाल	14921	12532	14919	84
10	बुरहानपुर	12650	11876	12648	93.8
11	छतरपुर	33213	27295	32957	82.2
12	छिन्दवाड़ा	28863	24706	28823	85.7
13	दमोह	39506	34383	39400	87.2
14	दतिया	6951	6768	6946	97.4
15	देवास	22159	21199	22127	95.8
16	धार	39973	34439	39927	86.2
17	डिण्डोरी	27843	23894	27742	86.1
18	गुना	30356	25251	30304	83.3
19	ग्वालियर	7269	6849	7259	94.3
20	हरदा	11480	10314	11426	90.2
21	होशंगाबाद	26316	22129	26280	84.2
22	इन्दौर	7881	7407	7865	94.9
23	जबलपुर	43814	37853	43792	86.4
24	झाबुआ	28028	21607	27978	77.2
25	कटनी	42978	39424	42950	91.7
26	खंडवा	25364	21927	25344	86.5
27	खरगोन	42750	38162	42732	89.3
28	मण्डला	35970	32324	35889	90
29	मन्दसौर	30988	29681	30979	95.8
30	मुरैना	13109	11971	13079	91.5
31	नरसिंहपुर	44399	40614	44322	91.6
32	नीमच	10363	8861	10354	85.5
33	पन्ना	30745	27815	30663	90.7
34	रायसेन	38033	32284	37984	84.9
35	राजगढ	50007	42805	50018	85.5
36	रतलाम	31366	28623	31299	91.4

क्र.	जिला	लक्ष्य	निर्मित	स्वीकृत	प्रतिशत
37	रीवा	41336	33451	41293	81
38	सागर	58855	50123	58519	85.6
39	सतना	44539	36605	44316	82.5
40	सीहोर	25598	23751	25587	92.8
41	सिवनी	38288	31930	38233	83.5
42	शहडोल	39418	35813	39402	90.8
43	शाजापुर	11211	10174	11202	90.8
44	श्योपुर	15184	14025	15178	92.4
45	शिवपुरी	20999	17583	20988	83.7
46	सीधी	19663	16839	19601	85.9
47	सिंगरौली	20498	15403	20460	75
48	टीकमगढ	29295	27015	29105	92.8
49	उज्जैन	18425	17691	18423	96
50	उमरिया	26550	24599	26510	92.7
51	विदिशा	39998	35997	39663	90
	कुल	1399001	1221557	1396078	87.4

स्रोत : ग्रामीण विकास मन्त्रालय, भारत सरकार। www.rhreporting.nic.in

तालिका 2 प्रदर्शित करती है कि मध्यप्रदेश राज्य में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) के अन्तर्गत कुल 13,99,001 मकानों के निर्माण का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसमें से 13,96,078 मकान स्वीकृत किये गये तथा 12,21,557 मकानों का निर्माण किया गया। इस प्रकार 87 प्रतिशत कार्य इस योजना के अन्तर्गत लक्ष्य अनुसार पूर्ण हो चुका है। आँकड़े बताते हैं कि 80 प्रतिशत से अधिक कार्य मध्यप्रदेश के प्रत्येक जिले में पूर्ण हो चुका है। सबसे अधिक कार्य 97 प्रतिशत दतिया जिले में पूर्ण हुआ तथा सबसे कम रीवा जिले में 81 प्रतिशत हुआ। स्वीकृत आवासों में से निर्मित आवासों का आँकड़ा मध्यप्रदेश के प्रत्येक जिले में सन्तोषजनक है।

मध्यप्रदेश के धार जिले में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) की स्थिति

मध्यप्रदेश का धार जिला आदिवासी बहुल जिला है जहाँ 55.9 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासी है। जनगणना 2011 के अनुसार धार जिले की कुल जनसंख्या 21,85,793 है जिसमें 11,12,725 पुरुष तथा 10,73,068 महिलाएँ हैं। इस प्रकार यहाँ कुल 4,25,914 परिवार निवास करते हैं जिनमें अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत हैं। कुल जनसंख्या का 81.10 प्रतिशत (2,17,612) गाँवों में निवास करता है। यहाँ आदिवासी जनसंख्या का प्रतिशत सर्वाधिक है। यहाँ आदिवासी पुरुषों की संख्या 6,14,619 तथा महिलाओं की 6,08,195 है। इस प्रकार वर्ष 2011 की जनगणना अनुसार आदिवासी की संख्या 12,22,814 है, जबकि

अनुसूचित जाति की मात्र 6.7 प्रतिशत जनसंख्या धार जिले में निवास करती है (जिला सांख्यिकी विभाग, धार, 2018)।

धार जिले में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) की स्थिति को तालिका 3 में प्रदर्शित किया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि 13 विकासखण्डों में विभाजित धार जिले में प्रधानमन्त्री आवास योजना के अन्तर्गत 39,973 आवासों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया था, जिसमें से 39,927 स्वीकृत किये गये तथा 34,439 आवासों का निर्माण किया जा चुका है। अर्थात् 86.2 प्रतिशत कार्य योजना के अन्तर्गत जिले में पूर्ण हो चुका है। प्रत्येक विकासखंड में 70 प्रतिशत कार्य पूरा हो चुका है। सर्वाधिक निर्माण कार्य धार विकासखण्ड में 96 प्रतिशत पूर्ण हो चुका है। जबकि सबसे कम तिरला विकासखण्ड में 70 प्रतिशत कार्य किया गया। धार जिले में सबसे कम कार्य का प्रतिशत 70 प्रतिशत है, जो स्वयं में आदिवासी बहुल जिले धार में योजना की सफलता दर्शाता है। आदिवासी तथा ग्रामीण बहुल जिला होने के कारण निश्चित ही इस योजना का लाभ आदिवासी ग्रामीण को प्राप्त हुआ है।

तालिका 3

मध्यप्रदेश के धार जिले में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) की स्थिति

क्र.	विकासखण्ड	लक्ष्य	स्वीकृत	निर्मित	प्रतिशत
1	बदनावर	3704	3702	3463	93.5
2	बाग	2503	2503	2203	88
3	डही	2564	2563	2248	87.7
4	धार	888	885	851	96.1
5	धरमपुरी	4321	4319	3171	73.4
6	गन्धवानी	3650	3650	3043	83.3
7	कुक्षी	2168	2164	1979	91.4
8	मनावर	2553	2547	2356	92.5
9	नालछा	2900	2892	2407	83.2
10	निसरपुर	1696	1694	1591	93.9
11	सरदारपुर	6265	6264	5793	92.4
12	तिरला	3557	3550	2498	70.3
13	उमखन	3204	3194	2836	88.7
	कुल	39973	39927	34439	86.2

स्रोत : www.rhreporting.nic.in

सम्पूर्ण भारत, मध्यप्रदेश तथा मध्यप्रदेश के आदिवासी बहुल जिले धार की बात इस योजना के सन्दर्भ में की जाये तो प्रत्येक स्तर पर सन्तोषप्रद कार्य की प्रगति दृष्टिगोचर होती है। वास्तव में प्रधानमन्त्री आवास योजना (ग्रामीण) केवल गाँव में ही आवास के सपनों को पूरा नहीं करती बल्कि गाँवों के सर्वांगीण विकास पर आधारित है क्योंकि प्रधानमन्त्री आवास योजना के साथ सरकार की कई अन्य योजनाएँ भी जोड़ी गयी हैं। शौचालयों को

बढ़ावा देने के लिए प्रधानमन्त्री आवास योजना में आवास के साथ स्वच्छ भारत अभियान के तहत शौचालयों की सुविधा भी ग्रामीणों को प्राप्त हो रही है। इस सुविधा से खुले में शौच की समस्या के निदान के साथ घरों के आसपास सफाई भी रहती है। सौभाग्य योजनान्तर्गत आवासीय घरों में बिजली भी प्रदान की जा रही है। स्वयं का घर बनाने के लिए कौशल भारत कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की गयी है जिससे कौशल भारत कार्यक्रम तथा मेक इन इंडिया को बढ़ावा मिला है। उज्ज्वला योजना के अन्तर्गत पुराने तथा नये घरों में एलपीजी गैस कनेक्शन प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया है। इस योजना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि मनरेगा जैसे विशाल कार्यक्रम को इसमें जोड़ा गया है। लाभार्थी मनरेगा में मजदूरी स्वयं के मकान निर्माण में प्राप्त कर सकता है। जिससे दो लाभ होते हैं - एक तो उसे स्वयं के मकान बनाने के लिए अलग से मजदूर की व्यवस्था नहीं करनी पड़ती। दूसरे मजदूर को दी जाने वाली मजदूरी मनरेगा के तहत उसे स्वयं को प्राप्त हो जाती है। साथ ही वह अपने अनुसार आवास का निर्माण रुचि लेकर करता है, इससे निर्माण में गुणवत्ता आती है। इसी के साथ इस योजना द्वारा आवास के लिए सहायक असंख्य उद्योगों के माध्यम से प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से कई लोगों को रोजगार प्रदान किया है। क्योंकि प्रत्येक घर बनाने से लेकर खंडहर होने तक कई रोजगार उत्पन्न करता है जैसे मिस्त्री, प्लम्बर, बढ़ाई, मजदूर आदि। किसी भी सामाजिक कार्यक्रम के व्यय चाहे वो मनरेगाा हो, आवास योजना या राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम का सूक्ष्म तथा वृहद् प्रभाव पड़ता ही है। इन कार्यक्रमों के कारण प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से हजारों लोगों को रोजगार भी प्राप्त हुआ है। इसका आय पर भी सकारात्मक प्रभाव पडा है (शर्मा, 2017)।

इस योजना को अधिक प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए आवश्यक है कि इस योजना के सम्बन्ध में लाभार्थियों को उचित प्रशिक्षण दिया जाये ताकि योजना के प्रत्येक पहलू को लाभार्थी समझ सके। इसी के साथ इस योजना में लागत को ध्यान में नहीं रखते हुए प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक जैसी किश्त की व्यवस्था की गयी है, जबकि दूरस्थ क्षेत्रों में मकान के लिए सामग्री लाने की लागत अत्यधिक हो जाती है इसलिए प्रथम किश्त में वृद्धि की आवश्यकता है तथा क्षेत्र विशेष के आधार पर जिला प्रशासन द्वारा इसमें वृद्धि की जानी चाहिये। आवास में पर्याप्त रोशनदान, प्रकाश आदि आधारभूत संरचना हेतु इंजीनियर द्वारा समय-समय पर आवास का निरीक्षण करने का प्रावधान कर इसका अनिवार्य रूप से पालन सुनिश्चित किया जाना चाहिए। साथ ही उड़ीसा तथा अन्य राज्यों की भाँति सम्पूर्ण देश में आवास को समय-सीमा में पूर्ण करने पर कुछ नकद राशि प्रदान की जानी चाहिए जिससे आवास को समय-सीमा में लाभार्थी द्वारा पूर्ण किया जा सके। आवास के साथ ही शौचालय के निर्माण और उसके उपयोग पर भी अनिवार्यत: नियम लागू करने की आवश्यकता है क्योंकि शौचालयों का निर्माण तो कर लिया जाता है किन्तु उसके उपयोग के प्रति ग्रामीणों में उदासीनता पायी जाती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में आवास निर्माण हेतु गाँव में प्रवाहित होने वाली नदियों की रेत का उपयोग आवश्यकता के अनुरूप लाभार्थी को करने की स्वीकृति प्रदान की जाने की आवश्यकता है ताकि ग्रामों में उपलब्ध संसाधनों का उपयोग भी हो सके। ग्रामीण क्षेत्रों में गुणवत्ता सुधार पर अधिक जोर देना चाहिये। आवास की उपलब्धता से जीवन स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। इसी के साथ सतत वित्तीय उपलब्धता को भी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है क्योंकि ग्रामीण आवास की मुख्य समस्या गुणवत्ता की है न कि संख्या की (कुमुद, 2014)। ग्रामीण आवास योजना को उपर्यक्त सुझावों के समावेश के साथ क्रियान्वयन किया जाये तो निश्चित ही समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों तथा निम्न आय समूह के लोगों के लिए किफायती आवास आसानी से उपलब्ध हो सकेंगे और इस योजना के अच्छे परिणाम देश को प्राप्त हो सकेंगे।

सन्दर्भ

कुमुद डी., (2014) परफार्मेंस ऑफ इन्दिरा आवास योजना एण्ड रूरल डेवलपमेण्ट इन इण्डिया, *इण्डियन जर्नल ऑफ अप्लाइड रिसर्च,* भाग 4, अंक 8, अगस्त.

जिला धार सांख्यिकी पुस्तिका - 2018, जिला सांख्यिकी विभाग, धार, 2018.

शर्मा, अखिलेश एवं सलूजा, एम.आर. (2017) मैक्रोइकॉनॉमिक इम्पेक्ट ऑफ सोशल प्रोटेक्शन प्रोग्राम्स इन इण्डिया, *इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* भाग 51, अंक 24.

हिरवे, इन्दिरा (1987) हाऊसिंग फॉर द रूरल पुअर, *इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* भाग 22, अंक 34.

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
(म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान का अर्द्धवार्षिक जर्नल)
ISSN: 0973-8568 (वर्ष 17, अंक 1, 2019, पृ. 72-75)

पुस्तक समीक्षा

वर्तमान हिन्दी पत्रकारिता की नब्ज़ पहचानने की कोशिश

अर्चना प्रकाश मेहता
इन्द्रा प्रकाशन, भोपाल, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 160, मूल्य : रु. 175/-

आशीष दशोत्तर*

समय के साथ हिन्दी पत्रकारिता ने कई सोपान तय किए हैं । निरन्तर विकसित होती हिन्दी पत्रकारिता ने कई सारी उपलब्धियाँ भी अर्जित की हैं। हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास को हम स्वर्णिम इतिहास इसलिए कहते हैं कि हिन्दी पत्रकारिता ने अपने जन्म से लेकर उसके शैशवकाल, किशोरवय और उसके परिपक्व होने तक के सफर को बखूबी अंजाम दिया है। कई सारे परिवर्तन समय के साथ होते रहे, कई सारी आशाएँ और निराशाएँ इसके साथ जुड़ती रहीं। कई सारी उपलब्धियाँ, कई सारी विफलताएँ इसके खाते में आती रहीं। लेकिन वक्त के साथ सफर करते हुए हिन्दी पत्रकारिता ने जो मुकाम तय किया है वह स्मरणीय है। युवा लेखिका डॉ. अर्चना प्रकाश मेहता ने 'हिन्दी पत्रकारिता का बदलता स्वरूप' पुस्तक के माध्यम से हिन्दी पत्रकारिता के इसी स्वर्णिम इतिहास को अपने शब्दों में दोहराने की कोशिश की है। लेखिका अपने इस प्रयास में इस मायने में सफल रही है कि सीमित शब्दों में अपनी बात को प्रभावी ढंग से वह कह सकी हैं।

* वरिष्ठ साहित्यकार, 12/2,कोमलनगर, बरवड़ रोड, रतलाम (म.प्र.).
E-mail: ashishdashottar2580@gmail.com

हिन्दी पत्रकारिता को यदि समझना है तो इस पुस्तक के माध्यम से आसानी से समझा जा सकता है। यद्यपि इस विषय पर कई ग्रन्थ प्रकाश में आ चुके हैं और बहुत अधिक विस्तार से इस विषय पर चर्चा हो चुकी है लेकिन लेखिका ने वर्तमान परिस्थितियों में हिन्दी पत्रकारिता के बदलते स्वरूप को ध्यान में रखते हुए इसे निरन्तर होते परिवर्तनों पर केन्द्रित किया है।

तकरीबन 150 पृष्ठों की इस पुस्तक को अर्चना ने पाँच अध्यायों में विभक्त किया है। यह पाँच अध्याय क्रमश: पत्रकारिता एवं भारत की प्रारम्भिक पत्रकारिता, हिन्दी पत्रकारिता की शुरुआत, आधुनिक दौर की हिन्दी पत्रकारिता, वर्तमान में हिन्दी पत्रकारिता की दशा और दिशा तथा हिन्दी पत्रकारिता में आने वाली चुनौतियाँ एवं समाधान हैं। पहले तीन अध्याय हिन्दी पत्रकारिता के प्रारम्भ, उसकी गति, उपलब्धि और उसके उस मिशन भाव को व्यक्त करते हैं जिसमें हिन्दी पत्रकारिता पली-बढ़ी और उसका विकास होता रहा। 'जिज्ञासा मानव की मूल प्रवृत्ति है' इस वाक्य से प्रारम्भ होकर लेखिका ने इसे समाप्त इस वाक्य के साथ किया है 'समाचार का मुख्य कार्य घटना को सत्य रूप में चित्रित करना है' इन दो वाक्यों, जो प्रारम्भ एवं अन्त में प्रयोग किये गये हैं, उससे पत्रकारिता के सफर को आसानी से समझा जा सकता है।

जिज्ञासा मानव को अपने परिवेश अपनी परिस्थितियों और आसपास की घटनाओं की तरफ प्रवृत्त करती है, लेकिन आम व्यक्ति के पास वह दृष्टि नहीं होती कि वह उन घटनाओं को निष्पक्ष रूप से सत्यता से और गहराई तक जाकर देख सके,परख सके। इन घटनाओं को सत्य रूप में, निष्पक्ष रूप में प्रस्तुत करने का दायित्व पत्रकार का होता है। पत्रकार जब अपने कर्तव्य को पूर्ण करता है तो यह कहा जाता है कि वह पत्रकारिता के दायित्व को निभा रहा है। अर्चना ने इस श्रमसाध्य कार्य में पत्रकारिता की अवधारणा, उसकी परिभाषाएँ और उसके अर्थ प्रस्तुत कर इसके मूल में जाने की कोशिश की है । साथ ही पत्रकारिता के विभिन्न क्षेत्र यानी खोजी पत्रकारिता, राजनीतिक पत्रकारिता, शैक्षिक पत्रकारिता, खेल पत्रकारिता, ग्रामीण एवं कृषि पत्रकारिता, साहित्यिक पत्रकारिता, व्यावसायिक पत्रकारिता, अपराध पत्रकारिता, धार्मिक पत्रकारिता, फोटो पत्रकारिता जैसे कई विषयों का वर्णन किया है। समयानुसार इसमें कई सारे नये विषय भी जुड़ते गये जो आज हमारे सामने विज्ञान पत्रकारिता, तकनीकी पत्रकारिता, भाषाई पत्रकारिता आदि स्वरूपों में सामने आते रहते हैं। यह सही है कि हिन्दी पत्रकारिता की शुरुआत जब 30 मई 1826 को उदन्त मार्तंड के साथ हुई तब हिन्दी साहित्य नयी करवट ले रहा था। वातावरण में राष्ट्रीयता की भावना फैल रही थी। तब जो व्यक्ति पत्रकारिता की तरफ अग्रसर हुए वे साहित्यकार थे, राजनीतिज्ञ थे और लिखने-पढ़ने की समझ रखते थे।

यही कारण रहा कि स्वतन्त्रता प्राप्ति में पत्रकारिता एक महत्वपूर्ण हथियार बनी और पत्रकारिता को एक मिशन मिला। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद पत्रकारिता में धीरे-धीरे बदलाव आते गये। अर्चना ने अपने तीसरे अध्याय 'आधुनिक दौर की हिन्दी पत्रकारिता' में समाचार,

समाचार के स्रोत, समाचार का स्वरूप, समाचार लिखने की प्रक्रिया जैसे कई बिन्दुओं की चर्चा की है।

इस अध्याय में वे लिखती हैं, "कम्प्यूटर के प्रयोगों से समाचारों का संकलन, सम्पादन एवं सम्प्रेषण में अचानक गति आ गई। दूरियाँ कम हो गईं। सारे केन्द्र एक-दूसरे से जुड़ गए। सभी सूचनाएँ एक दूसरे को तत्काल उपलब्ध होने लगीं। अलग-अलग विषयों की कम्प्यूटर फाइल तैयार होने लगीं। कार्यालय सम्बन्धी सभी सूचनाएँ भी कम्प्यूटर में आ गईं। वितरण सम्बन्धी सूचनाएँ, एजेंट का रिकॉर्ड, वितरण, वाहन एवं ठेकेदारों का रिकॉर्ड, विज्ञापनों का सूचीकरण, डमी, पृष्ठ संयोजन भी कम्प्यूटरीकृत हो गया। लेखा विभाग के बिल बनाने से लेकर वित्तीय नियोजन रसीद और भुगतान की सूचनाएँ, सब कुछ एक ही जगह उपलब्ध होने लगीं।"

कम्प्यूटर से सारी दुनिया में बहुत से बदलाव आये और इन बदलावों के कारण पत्रकारिता की दिशा एकदम परिवर्तित हुई ।

चौथा अध्याय 'वर्तमान में हिन्दी पत्रकारिता की दशा और दिशा' पर केन्द्रित है। इस अध्याय में लेखिका ने पत्रकारिता में बाजार के प्रवेश, अखबारों में बढ़ती प्रतिस्पर्धा, समाचार पत्रों की विश्वसनीयता जैसे बिन्दुओं पर चर्चा की है, जिसके कारण हिन्दी पत्रकारिता की दिशा बदली है और उसकी दशा पर भी चिन्तन होने लगा है। आम नागरिकों का समाचार पत्रों में कितना योगदान रहा है तथा हमारी भाषाएँ और बोलियाँ किस तरह समाचार पत्रों में अपना महत्व कायम रख पा रही हैं, इन पर इस अध्याय में विमर्श हुआ है। यह विमर्श और भी अधिक चिन्तनपरक हो सकता था।

अन्तिम अध्याय 'हिन्दी पत्रकारिता में आने वाली चुनौतियाँ एवं समाधान' पर केन्द्रित है। यह इस पुस्तक का सार भी है। मिशन से प्रारम्भ हुई पत्रकारिता चुनौतियों का सामना करते हुए आज जिस दौर में पहुँची है वहाँ उसके सामने कई सारी परेशानियाँ हैं, कई सारी चुनौतियाँ हैं और बाजार के साथ तालमेल बैठाते हुए अपनी संस्कृति और अपने वैभव को बचाने का जिम्मा भी है। लेखिका ने इन सभी बिन्दुओं पर विस्तार से चर्चा की है। खासतौर से प्रिंट मीडिया में हिन्दी को लेकर उन्होंने कई सारे अखबारों के तुलनात्मक अध्ययन को भी प्रदर्शित किया है।

आज पत्रकारिता और पत्रकार के सामने जो चुनौतियाँ मौजूद हैं उनका किस तरह के सामना करें इस बारे में भी काफी विस्तार से बताया है। वे लिखती हैं, "पत्रकारिता आज मिशन से प्रोफेशन तक पहुँच गई है, लेकिन चुनौतियों में सबसे बड़ी चीज प्रतिस्पर्धा के इस युग में अपनी विश्वसनीयता बरकरार रखना है। यह विश्वसनीयता ही आने वाले समय में हिन्दी पत्रकारिता को और अधिक प्राणवान बनाएगी।" यह पुस्तक हिन्दी पत्रकारिता पर एक चिन्तन के लिए प्रेरित तो करती ही है साथ ही शोधार्थियों के लिए और हिन्दी पत्रकारिता को जानने वाले नव प्रवेशियों के लिए एक पीठिका भी तैयार करती है।

चूंकि लेखिका स्वयं पत्रकारिता की विद्यार्थी रही हैं और उन्होंने पत्रकारिता पर शोध कार्य भी किया है, इसलिए यदि पुस्तक में उस शोध कार्य के दौरान किये गये कुछ महत्वपूर्ण तथ्य और हिन्दी पत्रकारिता, खासतौर से क्षेत्रीय पत्रकारिता की स्थिति को लेकर तुलनात्मक आँकड़ों के माध्यम से अध्ययन प्रस्तुत किया जाता तो वह छात्रों के लिए और अधिक महत्वपूर्ण होता।

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल
के स्वामित्व एवं अन्य विवरण के सन्दर्भ में घोषणा

फार्म - 4 (नियम 8)

1.	प्रकाशन का स्थान	:	मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, 6, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन (म.प्र.) 456010
2.	प्रकाशन अवधि	:	अर्द्धवार्षिक
3.	मुद्रक का नाम	:	डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया
	क्या भारत के नागरिक है?	:	हाँ
	(यदि विदेशी हैं तो मूल देश)	:	लागू नही
	पता	:	6, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन (म.प्र.) 456010
4.	प्रकाशक का नाम	:	डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया
	क्या भारत के नागरिक है?	:	हाँ
	(यदि विदेशी हैं तो मूल देश)	:	लागू नही
	पता	:	6, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन (म.प्र.) 456010
5.	सम्पादक का नाम	:	डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया
	क्या भारत के नागरिक है?	:	हाँ
	(यदि विदेशी हैं तो मूल देश)	:	लागू नही
	पता	:	6, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन (म.प्र.) 456010
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हो, तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों	:	निदेशक, मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान 6, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन (म.प्र.) 456010

मैं डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गये विवरण सत्य हैं।

डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया
प्रकाशक के हस्ताक्षर

लेखकों के लिए अनुदेश

- म.प्र. सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल में प्रकाशन हेतु समाज विज्ञान के किसी भी पक्ष पर मौलिक शोध एवं साहित्य की समीक्षा पर आधारित विश्लेषणात्मक शोध आलेख आमंत्रित है। इस सन्दर्भ में किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार सम्पादक, मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल, म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, 6 रामसखा गौतम मार्ग, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन - 456010 के नाम से किया जाये।
- शोध आलेख एमएस-वर्ड में ए-4 आकार के पेपर पर डबल स्पेस में कृतिदेव010 फोण्ट में टाइप होना चाहिए। शोध आलेख 5000 से 8000 शब्दों के बीच होना चाहिए। शोध आलेख के साथ 150 शब्दों में शोध आलेख का सारांश भी भेजें। शोध आलेख के साथ उसकी सॉफ्ट कॉपी सीडी में अथवा mpissrhindijournal@gmail.com पर ई-मेल करे।
- प्रकाशन हेतु प्राप्त प्रत्येक शोध आलेख की दो विषय विशेषज्ञों द्वारा समीक्षा की जायेगी। समसामयिक प्रासंगिकता, स्पष्ट एवं तार्किक विश्लेषण, सरल एवं बोधगम्य भाषा, उचित प्रविधि आदि शोध आलेख के प्रकाशन हेतु स्वीकृति के मानदण्ड होंगे। किसी भी शोध आलेख को स्वीकृत/अस्वीकृत करने का अधिकार सम्पादक का होगा।
- सभी टिप्पणियाँ एवं सन्दर्भ शोध आलेख के अंत में दिये जाएँ तथा शोध आलेख में यथास्थान उनका आवश्यक रूप से उल्लेख करें।

पुस्तकों के लिए सन्दर्भ हेतु निम्न पद्धति का अनुसरण करें

उपनाम, नाम (प्रकाशन वर्ष), पुस्तक का नाम, प्रकाशक, प्रकाशन स्थान, पृष्ठ

जर्नल्स के लिए सन्दर्भ हेतु निम्न पद्धति का अनुसरण करें

उपनाम, नाम (प्रकाशन वर्ष), 'आलेख का शीर्षक', जर्नल का नाम, अंक, खण्ड, प्रकाशक, प्रकाशन स्थान, पृष्ठ

मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन

म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान, उज्जैन भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान परिषद्, मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली तथा उच्च शिक्षा मन्त्रालय, मध्यप्रदेश शासन द्वारा स्थापित स्वायत्त शोध संस्थान है। कार्य एवं स्वरूप की दृष्टि से मध्यप्रदेश में यह अपनी तरह का एकमात्र शोध संस्थान है। समाज विज्ञानों में समकालीन अन्तरशास्त्रीय संदृष्टि को बढ़ावा देते हुए मध्यप्रदेश में समाज विज्ञान मनीषा का सशक्त संवाहक बनना संस्थान का मूल उद्देश्य है।

अपनी संस्थापना से ही यह संस्थान सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक एवं विकास की विभिन्न समस्याओं, मुद्दों और प्रक्रिया ओं पर अन्तरशास्त्रीय शोध को संचालित व प्रोत्साहित करते हुए सामाजिक, आर्थिक और नीतिगत महत्त्व की शोध परियोजनाओं को क्रियान्वित करता है।

संस्थान की शोध गतिविधियाँ मुख्यतः पंचायत राज एवं ग्रामीण विकास, लैंगिक अध्ययन, अनुसूचित जाति एवं जनजाति से सम्बन्धित मुद्दे, विकास एवं संस्थापन, पर्यावरण अध्ययन, सामाजिक न्याय, लोकतन्त्र एवं मानवाधिकार, सूचना तकनीकी तथा समाज, शिक्षा एवं बाल अधिकार एवं नवीन आर्थिक नीतियाँ आदि संकेन्द्रण क्षेत्रों पर केन्द्रित हैं।

परिसंवादों, संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों आदि अकादमिक अनुष्ठानों का आयोजन, समाज विज्ञानों में अनुसन्धानपरक नवोन्मेष एवं नवाचारों का प्रवर्तन, मन्त्रालयों एवं अन्य सामाजिक अभिकरणों को परामर्श एवं शोधपरक सहयोग प्रदान करना संस्थान की अन्य प्रमुख गतिविधियाँ हैं। संस्थान में एक संवर्द्धनशील पुस्तकालय एवं प्रलेखन केन्द्र है जिसमें समाज विज्ञानों पर पुस्तकें, शोध पत्रिकाएँ और प्रलेख उपलब्ध हैं।

संस्थान शोध कार्यों को अवसरिक पत्रों, विनिबन्धों, शोध-पत्रों एवं पुस्तकों के रूप में प्रकाशित करता है। इसके अतिरिक्त दो षाण्मासिक शोध जर्नल - मध्यप्रदेश जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज़ (अँग्रेजी) एवं मध्यप्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसन्धान जर्नल (हिन्दी) का प्रकाशन भी संस्थान द्वारा किया जाता है।

भारत के समाचार पत्रों के पंजीयक के कार्यालय में पं.क्र. MPHIN/2003/10172 द्वारा पंजीकृत
म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध संस्थान के लिए डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया द्वारा 6, रामसखा गौतम मार्ग, भरतपुरी प्रशासनिक प्रक्षेत्र, उज्जैन - 456010 (मध्यप्रदेश) से प्रकाशित एवं मुद्रित
सम्पादक - डॉ. यतीन्द्रसिंह सिसोदिया